(Important Aspect of governance)

<u>गवर्नेंस/अभिशासन</u>

सामान्य अर्थों में अभिशासन/ गवर्नेंस सरकार की कार्यवाहियाँ अथवा गतिविधियों से संबंधित है। इस प्रकार जनता/राज्य को शासित करने की प्रक्रिया को अभिशासन कहा जाता है।

सरकार एवं गवर्नेंस दोनों एक दूसरे से संबंधित तो हैं, परन्तु दोनों भिन्न अवधारणाएँ हैं। सरकार एक निकाय होती है, जो किसी देश का प्रशासन चलाती है और लोकतांत्रिक प्रणाली में इसे जनता द्वारा चुना जाता है, जबकि अभिशासन सरकार द्वारा की जाने वाली कार्यवाहियों एवं गतिविधियों से संबंधित है और सरकार को प्राप्त सत्ता/शक्तियों का नियमों एवं विनियमों के आधार पर नौकरशाही के माध्यम से शक्तियों का प्रयोग है। इस प्रकार सरकार अभिशासन के उद्देश्य के लिए केवल एक उपकरण है।

उपर्युक्त परिभाषा से यह स्पष्ट होता है कि गवर्नेन्स की अवधारणा केवल सरकार तक सीमित नहीं होती है, बल्कि यह मूल्यों, नीतियों तथा संस्थाओं की ऐसी व्यवस्था है, जिसके द्वारा कोई भी समाज राज्य, सभ्य–समाज तथा निजी क्षेत्र की आपसी अन्तःक्रिया के माध्यम से अपने राजनीतिक, आर्थिक एवं सामाजिक मामलों का प्रबंधन करता है। इस प्रकार अभिशासन की अभिधारणा में राज्य, सभ्य–समाज व निजी क्षेत्र तीन प्रमुख कर्ता शामिल है। इस प्रकार गर्वेनेन्स की अवधारणा का मुख्य बल जन केन्द्रित विकास को बढ़ावा देने के लिए इन तीनों के मध्य अन्तःक्रिया को तीव्र करने पर होता है। इस दृष्टिकोण से इस अवधारणा तीन प्रमुख आयाम निम्नलिखित है।

1. <u>राजनीतिक आयाम</u>–इसके अन्तर्गत वे प्रक्रियाएं आती हैं, जिनके माध्यम से कोई समाज सहमति पर पहुँचता है तथा नियमों–विनियमों का क्रियान्वयन करता है। उदाहरणस्वरूप–मानवाधिकार, सरकारी नीतियाँ आदि।
2. <u>आर्थिक आयाम</u>–इसके अन्तर्गत राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आर्थिक नीतियों का निर्धारण, वस्तुओं एवं सेवाओं के प्रबंधन की प्रक्रिया तथा प्राकृतिक, मानवीय एवं राजकोषीय संसाधनों का निर्धारण शामिल है।
3. <u>सामाजिक आयाम</u>–मानदण्डों एवं मूल्यों आदि की ऐसी व्यवस्था जो सामाजिक व्यवहार एवं निर्णयों को निर्देशित एवं लाभान्वित करती है।

अभिशासन की अवधारणा का उद्भव

70 के दशक तक दुनिया के समस्त देशों में विकास की जिम्मेदारी नौकरशाही के कंधों पर थी, परन्तु 70 के दशक में यह स्पष्ट होने लगा कि नौकरशाही में व्याप्त विसंगतियाँ जैसे–लाल फीताशाही (कार्य में देरी), भाई–भतीजावाद, संसाधनों की बर्बादी, साध्य के बजाय साधन पर ज्यादा बल आदि के कारण सरकारें एवं प्रशासन अकार्यकुशल है। इन परिस्थितियों में विकल्प की तलाश की जाने लगी और एक वैकल्पिक व्यवस्था के रूप में उदारीकरण अपनाये जाने पर बल दिया जाने लगा। इस सन्दर्भ में ब्रिटेन में तत्कालिक प्रधानमंत्री मार्ग्रेट थेचर एवं अमेरिकी राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन ने महत्वपूर्ण पहल की। उदारीकरण के पक्ष में यह तर्क दिया कि कल्याणकारी अवधारणा अत्यन्त सरलीकृत है। यह व्यक्तियों को अनुशासनहीन बनाती है तथा पहल करने से रोकती है। इसीलिए इससे परे जाते हुए उदारीकरण अपनाया जाना चाहिए।

उदारीकरण के फलस्वरूप सरकार के समक्ष आने वाली चुनौतियों का सामना करने के लिए विद्वानों ने सरकार के पुनर्खोज की अवधारणा के अन्तर्गत सरकार को प्रबंधकीय गतिविधियाँ अपनाते हुए अपनी कार्यप्रणाली को कार्यकुशल एवं मितव्ययी बनाने पर बल दिया गया। इस बात की वकालत की गई की निजी क्षेत्र में विद्यमान समस्त प्रक्रियाओं को सरकारी क्षेत्र में भी शामिल किया जाना चाहिए जिससे का सरकार का समग्र निष्पादन बेहतर हो सकें।

प्रारंभिक दौर में ऊपर से नीचे की ओर विकास के प्रवाह की अवाधरणा विद्यामन थी, जिसे 70 के दशक में अपूर्ण एवं अनुपयुक्त माना गया और इसके द्वारा उत्पन्न समस्याओं को दूर करने के लिए शासन प्रक्रिया में जन–भागीदारी को बढ़ावा देने की वकालत की गई। इस सन्दर्भ में गैर सरकारी संगठनों (NGO's) का तेजी से विकास हुआ और इसी क्रम में सभ्य समाज की अवधारणा विकसित हुई। गवर्नेन्स की अवधारणा के तहत यह विचार व्यक्त किया गया कि सभ्य समाज की भागीदारी के बिना किसी भी समाज के लिए किये जाने वाले निर्णय एवं बनायी जाने वाली नीतियाँ एकांगी होगी और जनहित के बजाय उससे परे होने की संभावना होगी है।

गर्वेंस की अवधारणा के विकास में विश्व बैंक का महत्वपूर्ण योगदान है। विश्व बैंक ने सर्वप्रथम 1989 में उप–सहारा अफ्रीकी देशों की विकास की प्रक्रिया में अत्यन्त पिछड़े होने का कारण उन देशों के कमजोर अभिशासन को माना। पुनः वर्ष 1992 में विश्व बैंक ने अपने दस्तावेज जिसका शीर्षक ''विकास एवं अभिशासन'' था, में यह विचार व्यक्त किया कि विकासशील देशों के विकास के लिये उन देशों के पूअर गवर्नेन्स (च्ववत ळवअमतदंदबम) को दूर करते हुए गुड–गवर्नेन्स लाना होगा। विश्व बैंक ने बड़े ही कड़े शब्दों में कहा कि विकासशील देशों के अल्पविकास का कारण ना तो धनाभाव है और ना ही प्रोद्योगिकी का अभाव, बल्कि उनका कमजोर अभिशासन है। इस प्रकार विश्व बैंक ने सुशासन/श्रेष्ठ अभिशासन की अवधारणा का प्रतिपादन किया। इस अवधारणा में उसने निम्नलिखित बिन्दुओं पर बल दिया।

1. विधि का शासन (Rule of Law)
2. जवाबदेही (Accountability)
3. पारदर्शिता (Transparency)।
4. लोक क्षेत्र में प्रबंधन (Public Sector management)
5. जन–भागीदारी (People Participation)
6. तिस्पर्धा (Competation)
7. प्रत्युत्तर (Responsiveness)
8. कार्यकुशलता एवं प्रभावकारिता (Efficiency)(प्रभावकारिता का मापन निष्पादन मूल्यांकन के द्वारा किया जाता है।)
9. समता (Equity)
10. सहमति निर्माण/सहमति उन्मुखता (Consensus orientation)

विश्व बैंक ने विकासशील देशों पर उपर्युक्त सभी शर्तें आरोपित की और इन्हें शासन प्रक्रिया से अनिवार्यतः शामिल करने की शर्त लगायी।

<u>जवाबदेही–</u>

जवाबदेही को उत्तरदायित्व के एक विशिष्ट एवं औपचारिक दशा के रूप में समझा जाता है। इस प्रकार जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए औपचारिक तरीकों पर बल दिया जाता है। प्रायः जवाबदेही एवं उत्तरदायित्व दोनों को समानार्थी रूप में प्रयुक्त किया जाता है, परन्तु दोनों में भिन्नता है। जवाबदेही जहाँ केवल औपचारिक होती है वहीं उत्तरदायित्व के अन्तर्गत उच्च नैतिक व्यवहार शामिल होता है। उत्तरदायित्व का संबंध औपचारिक सत्ता/प्राधिकार से

हो भी सकता है और नहीं भी। उत्तरदायित्व जनहित के लिए उत्तरदायी प्रवृत्ति की भावना है, जबकि जवाबदेही विशिष्ट प्रक्रियाओं एंव प्राविधियों से संबंधित हाती हैं। इस प्रकार उत्तरदायित्व विषयनिष्ठ होता है और भीतर से ((Works with) अन्तःकरण) से कार्य करता है। जबकि जवाबदेही वस्तुनिष्ठ (Objective) होती है और इसे बाहर से सुनिश्चित किया जा सकता है।

शासनिक एवं प्रशासनिक जवाबदेही निम्नलिखित के प्रतिहोते हैं–

1. आन्तरिक पदसोपान
2. जनता के प्रति।

जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए नियंत्रण की आवश्यकता होती है। भारत जैसे–लोकतांत्रिक देशों में नियंत्रण की अनेक प्रविधियाँ विद्यमान है। नियंत्रण मुख्यतया आन्तरिक एवं बाह्य 2 प्रकार का होता है।

बाह्य नियंत्रण के तरीके–प्रशासन पर निम्नलिखित के माध्यम से बाहर से नियंत्रण रखा जाता है।

1. विधायी नियंत्रण।
2. कार्यपालिका नियंत्रण।
3. न्यायिक नियंत्रण।
4. नागरिक/जन नियंत्रण (Citizen Control)

आन्तरिक नियंत्रण के तरीके–

1. बजटीय नियंत्रण।
2. कार्मिक प्रबंधन।
3. कार्यकुशलता एवं निष्पादन मूल्यांकन।
4. व्यवसायिक मानदण्ड।
5. पदसोपानिक आदेश।
6. जाँच पड़ताल।
7. वार्षिक गोपनीय रिपोर्ट।

बाह्य नियंत्रण–

विधायी नियंत्रण

भारत में प्रशासन पर संसदीय नियंत्रण

समूहिक उत्तरदायित्व का सिद्धान्त–

KHAN GLOBAL STUDIES Most Trusted Learning Platform KHAN SIR

सम्पूर्ण मंत्रीमण्डल अपने–निर्णय के प्रति, संसद में सामूहिक रूप से उत्तरदायी होता है। दूसरे शब्दों में मंत्रीमण्डल के निर्णयों का संसद में हारना प्रधानमंत्री की मृत्यु अथवा इस्तीफा जैसी स्थितियों में संपूर्ण मंत्री मण्डल विघटित हो जाता है।

<u>मंत्रीय उत्तरदायित्व का सिद्धान्त–</u>

प्रत्येक मंत्री अपने मंत्रालय/विभाग के समस्त निर्णयों एवं कार्यवाहियों के प्रति व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है।

संसदीय नियंत्रण के निम्नलिखित प्रकार हैं–

(1) सामान्य (General)	(2)वित्तीय (Financial)	(3) विस्तृत (Detail)
संसद में विभिन्न प्रकार के प्रश्नों, संकल्पों एवं प्रस्तावों आदि के द्वारा।	बजट पारित करना तथा अंकेक्षण (।नकपज)।	विभिन्न संसदीय समितियों द्वारा नियंत्रण जैसे–लोकलेखा समिति, प्राक्लन समिति आदि।

1. सामान्य नियंत्रण–

विधायी–

प्रश्न काल (संसदीय प्रश्न)–संसद की बैठक का पहला घंटा इसके लिए रखा जाता है। इस समय में सांसद प्रश्न पूछते हैं और आमतौर पर मंत्रीगण उत्तर देते हैं। प्रश्न तीन प्रकार के होते हैं–<u>तारांकित</u>, <u>अतारांकित</u> और अल्प सूचना प्रश्न।

<u>तारंकित</u>–प्रश्न वह होता है, जिस पर तारक बना होता है। यह प्रश्न मौखिक उत्तर की माँग करता है। अतः इसके बाद पूरक प्रश्न पूछे जाते हैं।

<u>अतारांकित–</u>प्रश्न पर तारक नहीं बना होता है। चूँकि यह लिखित उत्तर की माँग करता है। अतः इसके बाद पूरक प्रश्न नहीं पूछे जा सकते हैं।

<u>अल्प सूचना</u> के प्रश्न वे होते हैं, जो दस दिन या उससे कम समय का नोटिस देकर पूछे जाते हैं। इनका उत्तर मौखिक रूप से दिया जाता है।

प्रश्न, प्रशासन पर विधायी नियंत्रण के प्रभावशाली उपकरण हैं और वे सरकारी कर्मचारियों को चौकन्ना और गतिशील रखते है। ब्रिटेन के पूर्व प्रधानमंत्री अर्ल एटली ने कहा था, ‘‘मैं हमेशा यह मानता हूँ कि सदन का प्रश्नकाल वास्तविक जनतंत्र का एक सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है। मंत्री से पूछे गये और

उससे भी अधिक सार्वजनिक तौर पर सदन में पूछे गए प्रश्नों का काम लोकसेवकों को सावधान रखना है।" इसी प्रकार गेट्स्केल का मत है, "जिस किसी ने लोकसेवा विभागों में काम किया है, वह मुझसे सहमत होगा कि संसद में पूछे जाने वाले प्रश्नों का डर ही वह प्रमुख चीज है जो अभिलेखों को रखने के मामले में (जिनको लोकसेवा के बाहर अनावश्यक समझा जाएगा) लोकसेवकों को अत्याधिक सतर्क, दब्बू और सावधान बनाता है।

शून्यकाल–प्रश्नकाल के विपरीत शून्य काल का कोई उल्लेख कार्यविधि के नियमों में नहीं मिलता। अतः सांसदों को उपलब्ध यह एक औपचारिक युक्ति है, जिसमें वे मामलों को बिना किसी पूर्व सूचना के उठा सकते हैं। यह प्रश्नकाल के तत्काल बाद शुरू हो जाता है और दिन की कार्यसूची के शुरू होने तक चलता है, दूसरे शब्दों में प्रश्नकाल और कार्यसूची के काल को शून्यकाल कहते हैं। संसदीय कार्यविधि में यह भारतीय नवोन्मेष है जो 1962 से चला आ रहा है।

आधे घंटे की बहस–वह पर्याप्त सार्वजनिक महत्व के उस मामले पर बहस शुरू करने के लिए है जिस पर पहले ही काफी बहस हो चुकी है और जिसके उत्तर को तथ्यों के आधार पर स्पष्टीकरण की जरूरत है। इस तरह की बहसों के लिए सभापति सप्ताह में तीन दिन दे सकता है। इस दौरान सदन के सामने कोई विधिवत प्रस्ताव नहीं लाया जाता या मतदान नहीं होता।

अल्पकालिक बहस–इसको दो घंटे की बहस भी कहा जाता हैं, क्योंकि इस प्रकार की बहस के लिए दो घंटे से अधिक का समय नहीं दिया जाना चाहिए। इस बहस को सांसद तत्काल सार्वजनिक महत्व के किसी मामले को उठाने के लिए उठा सकते हैं। इस तरह की बहसों के लिए सभापति सप्ताह में दो दिन का समय आवंटित कर सकता है। इस मामले में संसद मे न तो कोई औपचारिक प्रस्ताव लाया जाता है और न ही मतदान होता है। यह युक्ति 1953 से चली आ रही है।

अन्य बहसें–उपरोक्त बहसों के साथ–साथ सांसदों को अनेक अवसर भी मिलते हैं, जिनमें वे प्रशासन की चूकों और विफलताओं पर बयान लेने और आलोचना करने के लिए बहसें कर सकते हैं। ये अवसर निम्न हैं–

- राष्ट्रपति का उद्घाटन भाषण।
- कानून बनाने के लिए अनेक विधेयकों को प्रस्तुत करते समय (अर्थात् विधान पर बहस)।
- सामान्य सार्वजनिक हित के मामलों पर प्रस्ताव प्रस्तुत एवं पारित करते समय।

KHAN GLOBAL STUDIES Most Trusted Learning Platform KHAN SIR

ध्यानाकर्षण–अत्यावश्यक सार्वजनिक महत्व के किसी मामले पर मंत्री का ध्यान खींचने के लिए यह नोटिस संसद में सांसद द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। इसका प्रयोजन उस मामले पर मंत्री से अधिकारिक वक्तव्य लेना भी होता है। शून्यकाल की तरह संसदीय कार्यवधि में यह भी भारत की देन है, जो1954 से अस्तित्व में है, परन्तु शून्यकाल के विपरीत इसका उल्लेख कार्यविधि के नियमों में है।

स्थगन प्रस्ताव–संसद में सार्वजनिक हित के अत्यावश्यक मामले पर सदन का ध्यान आकर्षित करने के लिए इसको प्रस्तुत किया जाता है। इसको स्वीकार किये जाने के लिए 50 सदस्यों के समर्थन की आवश्यकता होती है। चूँकि यह सदन के सामान्य काम में बाधा डालता है। अतः इसको असाधारण उपाय कहा जाता है। इसमें सरकार की निन्दा का तत्व होता है, अतः इस उपाय का प्रयोग करने की अनुमति राज्यसभा को नहीं है।

अविश्वास प्रस्ताव–संविधान की धारा 75 में कहा गया है कि मंत्रिपरिषद् सामूहिक रूप से लोकसभा के प्रति उत्तरदायी होगा। इसका अर्थ है कि मंत्रिमंडल पद पर तब तक बना रहता है, जब तक इसमें लोकसभा के सदस्यों का बहुमत का विश्वास होता है। दूसरे शब्दों में अविश्वास प्रस्ताव पारित करके लोकसभा मंत्रिमण्डल को सत्ता से हटा सकती है।

निन्दा प्रस्ताव–निंदा प्रस्ताव निम्नलिखित अर्थों में अविश्वास प्रस्ताव से भिन्न है।

निन्दा प्रस्ताव एवं अविश्वास प्रस्ताव

निंदा प्रस्ताव	अविश्वास
1. इसको लोक सभा में पारित किये जाने के कारण बताने चाहिए।	1. इसको लोकसभा में पारित किये जाने के लिए कारण बताने की जरूरत नहीं।
2. यह किसी एक मंत्री या मंत्रियों के समूह या पूरी मंत्रिपरिषद् की निन्दा करने के लिए रखा जा	2. यह केवल पूरी मंत्रिपरिषद् के विरुद्ध ही रखा जा सकता है।

सकता है।	
3. यह मंत्रिपरिषद् की विशेष नीतियों और कार्यों की निन्दा करने के लिए रखा जाता है।	3. यह मंत्रिपरिषद पर लोकसभा के विश्वास का पता लगाने के लिए रखा जाता है।
4. लोकसभा में इसके पारित होने की स्थिति में मंत्रिपरिषद् को पद से त्यागपत्र देने की आवश्यकता नहीं।	4. यदि यह लोकसभा में पारित हो जाता है तो मंत्रिपरिषद् को पद से त्याग पत्र देना आवश्यक है।

बजट प्रणाली–प्रशासन पर संसदीय नियंत्रण रखने के लिए यह सबसे महत्वपूर्ण तरीका है। बजट अधिनियम के द्वारा संसद सरकार के राजस्व और खर्चों पर नियंत्रण रखती है। सरकारी कोष एकत्र करने तथा खर्च करने के लिए स्वीकृति प्राप्त करने की सर्वोच्च सत्ता हैं बजट पारित करने की प्रक्रिया के दौरान यह सरकारी नीतियों और कार्यों की आलोचना कर सकती है।

विनियोग और वित विधेयकों के पारित होने तक कार्यपालिका न तो खर्चे कर सकती है और न ही करों की वसूली।

लेखा परीक्षण पद्धति–यह प्रशासन पर संसदीय नियंत्रण का एक महत्वपूर्ण उपकरण है। संसद की ओर से सरकारी लेखा–जोखा की लेखा परीक्षा भारत का नियंत्रक और महालेखा परीक्षक (CAG) करता है और सरकार के वित्तीय लेन–देन के संबंध में वार्षिक 'लेखा–परीक्षा रिपोर्ट' प्रस्तुत करता है। CAG की रिपोर्ट सरकार के अनुचित, गैर कानूनी, मूखर्तापूर्ण, अलाभकर और अनियमित खर्चों को सामने लाती है। CAG संसद की प्रतिनिधि है और केवल इसके प्रति उत्तरदायी है। इस प्रकार संसद के प्रति सरकार की वित्तीय जवाबदेही ही CAG की लेखा–परीक्षा से सुरक्षित रखती है।

सार्वजनिक लेखा–समिति–भारत में इस समिति की स्थापना सर्वप्रथम 1921 में 1919 के भारत सरकार अधिनियम के प्रावधानों के अन्तर्गत हुई थी और तब से ही चली आ रही है। वर्तमान में इसके 22 सदस्य हैं (15 लोकसभा तथा 7 राज्यसभा से)। प्रत्येक वर्ष इनका चुनाव एकल हस्तांतरणीय मत के द्वारा समानुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त के अनुसार सांसदों में से किया जाता है। सदस्यों का कार्यकाल एक वर्ष है। इस समिति का सदस्य कोई भी मंत्री नहीं हो सकता। समिति के अध्यक्ष की नियुक्ति सभापति द्वारा इसके सदस्यों के बीच से की जाती है। 1966–67 तक समिति का अध्यक्ष शासक दल का होता था, परन्तु

KHAN GLOBAL STUDIES
Most Trusted Learning Platform
KHAN SIR

तब से एक परिपाटी का विकास हुआ है, जिसके द्वारा समिति के अध्यक्ष का चयन अनिवार्यताः विरोधी दल से होता है।

समिति का काम CAG की वार्षिक लेखा परीक्षा की जाँच करना है, जिसकों संसद में राष्ट्रपति द्वारा रखा जाता है। इस कार्य में समिति की सहायता CAG करता है।

सार्वजनिक लेखा समिति के कार्यों का विस्तृत विवरण लोकसभा में कार्यविधि तथा कार्य संचालन आदि नियमों को नियम 308 में इस प्रकार बताया गया है।

1. भारत सरकार के खर्चों के लिए सदन द्वारा स्वीकृत धनराशियों के उपयोग को प्रदर्शित करने वाले लेखा, भारत सरकार के वार्षिक वित्तीय लेखा तथा उन अन्य ऐसे लेखाओं की जाँच जिनको समिति सदन के समक्ष प्रस्तुत करना उचित समझती है।
2. भारत सरकार के विनियोग लेखा, लेख नियंता एवं महालेखा परीक्षक की रिपोर्ट की संवीक्षा में समिति का दायित्व है कि वो अपने आपको निम्न मामलों में संतुष्ट करे–

(क) कि लेखा में जिन धनराशियों को खर्च हुआ दिखाया गया है, वे उन सेवाओं या कार्यों पर खर्च करने या खर्चों में लिखने के लिए कानूनी रूप से उपलब्ध थी और उन पर लागू होती थीं।

(ख) कि खर्चे उनको नियंत्रित करने वाले अधिकारों से मेल खाते हैं।

(ग) कि प्रत्येक पुनर्विनियोग इस ओर उन प्रावधानों के अनुसार किया गया है जो सक्षम अधिकारी द्वारा नियमों के अनुसार बनाए गए हैं।

3. समिति का यह दायित्व भी ह–

(क) कि वो उन लेखा विवरणों की भी जाँच करें, जिनमें राज्य निगम, व्यापार तथा विनिर्माण योजनाओं, प्रतिष्ठानों और परियोजनाओं के आय–व्यय का विवरण हो। इसके साथ उनके पक्के–चिटठे और लाभ–हानि लेखा के विवरण की जाँच भी होनी चाहिए जिनको तैयार करने की माँग राष्ट्रपति ने की हो, जिनको किसी विशेष निगम, व्यापारिक या विनिर्माण योजना या प्रतिष्ठान या परियोजना के वित्तपोषण को नियंत्रित करने वाले वैधानिक नियमों के प्रावधानों के अधीन तैयार किया गया हो। इनके साथ ही साथ समिति का दायित्व इन सब पर कार्यबल की रिपोर्ट की भी जाँच करना है।

(ख) समिति का दायित्व स्वायत्त और अर्ध स्वायत्त निकायों की आय तथा व्यय के विवरणों के लेखा–और उस लेखा–परीक्षा की जाँच करना भी है, जिसे राष्ट्रपति के निर्देशों या संसद के किसी कानून के अधीन भारत के लेखा नियंता एक महालेखा परीक्षक के द्वारा किया गया हो।

4. एक वित वर्ष में किसी सेवा पर खर्च की गई धनराशि अगर सदन द्वारा उस उद्देश्य के लिए स्वीकृत धनराशि से अधिक है तो समिति तथ्यों के संदर्भ में प्रत्येक मामले की उन परिस्थितियों की जाँच करेगी जिनमें ये खर्चे अधिक हुए हैं, और ऐसी सिफारिशें करेंगी जिनको वो उचित समझती हैं।

लेकिन समिति अपने काम उन सार्वजनिक प्रतिष्ठानों के संबंध में नहीं करेगी जिनको इन नियमों के अंतर्गत या सभापति द्वारा सार्वजनिक प्रतिष्ठानों की समिति को आवंटित किए गए हैं।

अशोक चंद्रा के अनुसार ''अनेक वर्षों के दौरान समिति ने पूर्ण रूप से उन प्रत्याशाओं को पूरा किया है कि सार्वजनिक खर्चों पर नियंत्रण के मामले में इसके पास प्रभावशाली शक्ति विकसित होनी चाहिए। यह दावा किया जा सकता है कि सार्वजनिक लेखा समिति द्वारा स्थापित परंपराएँ और विकसित परिपाटियाँ संसदीय लोकतंत्र की सर्वोच्च परम्पराओं से मेल खाती है।''

अनुमान समिति–इस समिति की उत्पत्ति को 1921 में गठित स्थायी वित समिति (Standing Financial Committee) में खोजा जा सकता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् पहली आकलन समिति का गठन तत्कालीन वित मंत्री जॉन मथाई की सिफारिश के आधार पर 1950 में हुआ। प्रारंभ में इसमें 25 सदस्य थे, परन्तु 1956 में इनकी संख्या बढ़ाकर 30 कर दी गई। इन सदस्यों का निर्वाचन प्रत्येक वर्ष लोकसभा द्वारा एकल हस्तांतरणीय मत के द्वारा समानुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर इसके सदस्यों के बीच से किया जाता है। अतः इसमें सभी दलों का यथोचित प्रतिनिधित्व होता है। सदस्यों का कार्यकाल एक वर्ष होता है। मंत्री इसका सदस्य नहीं हो सकता। समिति के अध्यक्ष की नियुक्त सभापति द्वारा इसके सदस्यों में से की जाती है, यह निरपवाद रूप से शासक दल का होता है। इसमें राज्यसभा का प्रतिनिधित्व नहीं होता।

समिति का काम बजट में सम्मिलित अनुमानों की जाँच करना और सार्वजनिक खर्चों में मितव्यय के उपायों का सुझाव देना है, इसीलिए इसे 'मितव्ययता समिति' भी कहा जाता है।

लोकसभा की कार्यविधि एवं संचालन नियमों की नियम संख्या 310 और 312 में निर्धारित कायों के अनुसार आकलन समिति के कार्यों का विवरण ये हैं–

(क) यह बताना कि उन मितव्ययताओं, सांगठनिक सुधारों, कार्यकुशलताओं एवं प्रशासनिक सुधारों को लागू किया जा सकता है, जो अनुमानों के नीतिगत आधारों के अनुरूप हैं।

(ख) प्रशासन में कार्यकुशलता और मितव्ययता लाने के लिए वैकल्पिक नीतियों का सुझाव देना।

(ग) गहराई से यह देखना कि क्या अनुमानों में अंतनिर्हित नीतियों की सीमाओं के भीतर पैसे को भली–भाँति निर्धारित किया गया है।

(घ) उन प्रारूपों के सुझाव देना जिनमें अनुमानों को संसद में प्रस्तुत किया जाना है, लेकिन समिति वे कार्य नहीं करेंगी, जिनका संबंध ऐसे सार्वजनिक प्रतिष्ठानों से है जिनको इन नियमों या सभापति द्वारा सार्वजनिक प्रतिष्ठानों की समिति को सौंपा गया है।

समय–समय पर इन अनुमानों की जाँच करने और संसद को जाँच के परिणामों की रिपोर्ट देने का काम समिति पूरे वित्त वर्ष करती रह सकती है। समिति के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह एक वर्ष के सभी अनुमानों की जाँच करे। अनुदानों की मांग को कमेटी की रिपोर्ट न आने की दशा में भी पारित किया जा सकता है।

सार्वजनिक उपक्रम समिति–इस समिति का गठन कृष्ण मेनन समिति की अनुशंसा पर 1964 में किया गया था। मूलतया इसमें 15 सदस्य थे। (10 लोकसभा तथा 5 राज्यसभा से), परंतु 1974 में यह संख्या बढ़ाकर 22 कर दी गई। (15 लोकसभा से और 7 राज्यसभा से)। इनका निर्वाचन प्रत्येक वर्ष एक वर्ष के कार्यकाल के लिए एकल हस्तांतरणीय मत द्वारा और समानुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धांत के अनुसार संसद द्वारा किया जाता है। अतः सभी दलों को यथोचित प्रतिनिधित्व मिलता है। मंत्री को समिति का सदस्य नहीं चुना जा सकता है। समिति के अध्यक्ष की नियुक्ति, इसके लोकसभा द्वारा चुने गए सदस्यों के बीच से, सभापति द्वारा की जाती है। राज्यसभा से निर्वाचित सदस्य को अध्यक्ष नियुक्त नही किया जा सकता है।

सार्वजनिक उपक्रम समिति के कार्यों का निर्धारण लोकसभा के कार्यविधि एवं कार्य संचालन नियमों के नियम 312 ए में किया गया है, और ये निम्नलिखित हैं–

(क) सार्वजनिक प्रतिष्ठानों की रिपोर्टों और उनके लेखों की जाँच करना।

(ख) सार्वजनिक प्रतिष्ठानों पर लेखानियंत्रक एवं महालेखा–परीक्षक की रिपोर्टो (यदि कोई है) की जाँच करना।

(ग) सार्वजनिक प्रतिष्ठानों की स्वायत्ता और कार्य कुशलता के संदर्भ में जाँच करना कि क्या सार्वजनिक प्रतिष्ठानों को व्यापार के विवेकपूर्ण सिद्धान्तों और बुद्धिमता पूर्ण वाणिज्यिक आचरणों के अनुसार चलाया जा सकता है।

(घ) सार्वजनिक प्रतिष्ठानों के संबंध में सार्वजनिक लेखा समिति तथा आकलन समिति में निहित उन कार्यों को करना जो समय–समय पर सभापति द्वारा समिति को सौंपे जा सकते हैं। परन्तु समिति निम्न में से किसी की भी जाँच या छानबीन नहीं करेगी।

(i) सरकार की मुख्य नीति विषयक मामले, जो सार्वजनिक उपक्रमों के व्यावसायिक अथवा वाणिज्यिक कार्यों से अलग हैं।

(ii) दिन प्रतिदिन के प्रशासनिक मामले।

(iii) वे मामले जिन पर विचार के लिए विशेष कानून केद्वारा किसी संगठन का गठन किया गया, जिसके अधीन किसी विशेष सार्वजनिक उपक्रम की स्थापना हुई है।

अधीनस्थ विधान समिति–1953 में गठित इस समिति में सभापति द्वारा मनोनीत अध्यक्ष सहित 15 सदस्य होते हैं। इसके सदस्यों का कार्यकाल एक वर्ष का होता है। किसी मंत्री को इसका सदस्य नहीं चुना जा सकता है। समिति का अध्यक्ष विपक्ष से बनाया जाता है।

समिति का काम जाँच करना और लोकसभा को यह रिपोर्ट करना है कि नियम, उपनियम, विनिमय तथा परिनियम इत्यादि बनाने के जो अधिकार कार्यपालिका को संविधान द्वारा दिए गए अथवा संसद द्वारा सौंपे गए हैं, उनका प्रयोग इसके (कार्यपालिका) द्वारा उचित ढंग से किया जा रहा है अथवा नहीं। लोकसभा के सम्मुख प्रस्तुत किए जाने के पश्चात् समिति इस पर विचार करेगी (लोकसभा नियम सं0 320) कि–

(i) क्या यह संविधान के सामान्य उद्देश्यों के अनुसार है या जिस अधिनियम के लिए बनाया गया है, उसका संवर्धन करता है।

(ii) क्या इसमें वह सामग्री है, जिस पर समिति की राय में संसद के अधिनियम के अंर्तगत अधिक समुचित ढंग से विचार करना चाहिए था।

(iii) क्या इसमें कोई कर लगाना शाामिल है।

(iv) क्या प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से यह न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र का उल्लंघन करता है।

(v) क्या यह उस किसी प्रावधान को पूर्वप्रभावी बनाता है, जिसके लिए संविधान या अधिनियम स्पष्ट तौर पर इस प्रकार का कोई अधिकार नहीं देता।

(vi) क्या इससे भारत संचित निधि (Consolidated fund of India) या सार्वजनिक आय से कोई व्यय होता है।

(vii) क्या यह संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारों का असामान्य अथवा अप्रत्याशित प्रयोग करता है या उसके अनुसार काम करता प्रतीत होता है जिसके लिए बनाया गया है।

(viii) क्या ऐसा प्रतीत होता है कि इसने अपने प्रकाशन में अथवा संसद के सामने प्रस्तुत करने में अनुचित विलंब किया है।

(ix) क्या किसी भी कारण से इसके रूप या अभिप्राय को स्पष्टीकरण की आवश्यकता है।

आश्वासन समिति–अध्यक्ष सहित 15 सदस्यों की इस समिति का गठन 1953 में हुआ था। एक वर्ष के कार्यकाल के लिए इसके सदस्यों की नियुक्ति सभापति द्वारा की जाती है। इस समिति का सदस्य कोई मंत्री नियुक्त नहीं किया जा सकता है। समिति का काम लोकसभा में मंत्रियों द्वारा समय–समय पर दिये जाने वाले आश्वासनों, वचनों और प्रतिज्ञाओं इत्यादि की जाँच और रिपोर्ट करना (लोकसभा नियम सं.323) है कि–

1. इस तरह के आश्वासनों, वचनों और प्रतिज्ञाओं को किस हद तक पूरा किया गया है।
2. क्या इनको उस न्यूनतम समय के भीतर पूरा किया गया है जो इसके लिए आवश्यक था।

विभागीय स्थायी समिति–1993 में 17 विभागों से संबंधित स्थायी समितियों का गठन किया गया। इन्हें संसद में कार्यपालक मंत्रालयों पर नियंत्रण, विशेषतया वित्तीय नियंत्रण रखने के उद्देश्य से किया गया था। इन समितियों के अधिकार के अंतर्गत केंद्र सरकार के सभी मंत्रालय/विभाग आते हैं। प्रत्येक समिति में लोकसभा के 30 और राज्यसभा से 15 सदस्य होते हैं, जिनकों लोकसभा अध्यक्ष और राज्यसभा के सभापति द्वारा इन सदनों के सदस्यों के बीच से एक वर्ष के लिए मनोनीत किया जाता है। मंत्री को समिति का सदस्य नियुक्त नहीं किया जा

सकता है। 11 समितियों के अध्यक्षों की नियुक्ति लोकसभा अध्यक्ष तथा शेष 6 के अध्यक्षों का नियुक्ति राज्यसभा का सभापति समिति के सदस्यों के बीच से करता है। इनमें प्रत्येक दल का समानुपातिक प्रतिनिधित्व होता है। समितियों में से प्रत्येक समिति के कार्यों का निर्धारण लोकसभा के नियम सं0 331 (ई) में किया गया है।

1. संबद्ध मंत्रालय/विभाग की अनुदान माँगों पर विचार और उस सदनों में रिपोर्ट प्रस्तुत करना। रिपोर्ट में किसी भी कटौती प्रस्ताव का सुझाव नहीं होगा।
2. संबद्ध मंत्रालयों/विभागों से संबंधित ऐसे विधेयकों की जाँच करना जिनको राज्यसभा के सभापति या लोकसभा अध्यक्ष द्वारा समिति को सौंपा गया हो और उस रिपोर्ट को तैयार करना।
3. मंत्रालयों/विभागों की वार्षिक रिपोर्टों पर विचार करना और उन पर रिपोर्टें तैयार करना।
4. राज्यसभा के सभापति या लोकसभा अध्यक्ष द्वारा सौंपे जाने की स्थिति में राष्ट्रीय दीर्घकालीन मूल प्रलेखों पर विचार करना तथा उन पर रिपोर्टें तैयार करना। इन समितियों के कार्यों पर ये सीमाएँ लगाई गई हैं।
5. समितियों को संबंद्ध मंत्रालयों/विभागों की दिन–प्रतिदिन के प्रषासनिक मामलों पर विचार नहीं करना चाहिए।
6. आमतौर पर इनको उन मामलों पर विचार नहीं करना चाहिए जिन पर अन्य संसदीय समितियों द्वारा विचार किया जा रहा हो।

   ध्यातव्य हो कि इन समितियों की सिफारिषों की प्रकृति परामर्षी है; अतः संसद इनसे बँधी नहीं है।

अनुदानों की माँगों पर विचार करते समय प्रत्येक समिति निम्नलिखित कार्यविधि अपनाएगी और उस पर सदनों को रिपोर्ट प्रस्तुत करेगी। (नियम 331 जी)–

1. सदनों में बजट पर सामान्य चर्चा की समाप्ति के बाद दोनों सदन एक निश्चित काल के लिए स्थगित कर दिए जाएँगे।
2. संबद्ध मंत्रालय की अनुदान की माँगों पर समितियों द्वारा विचार उपरोक्त काल के दौरान ही किया जायेगा।
3. समितियाँ अपनी रिपोर्ट अवधि के भीतर ही तैयार करेंगी और अधिक समय की माँग नहीं करेंगी।
4. सदन में अनुदान की माँगों पर विचार समितियों की रिपोर्टों के आलोक में लिया जाएगा।
5. प्रत्येक मंत्रालय की अनुदान माँगों पर अलग से रिपोर्ट होगी।

विधेयकों की जाँच करने और उस पर रिपोर्ट तैयार करने के दौरान प्रत्येक समिति निम्नलिखित कार्यविधि का पालन करेगी। (नियम 332 एच)–

1. समिति उसकों सौंपे गए विधेयकों के सामान्य सिद्धान्तों तथा उसकी धाराओं पर विचार करेगी।
2. समिति केवल उन विधेयकों पर विचार करेगी जो या तो संसद के किसी सदन में प्रस्तुत किए गए हैं अथवा राज्यसभा के सभापति या लोकसभा के अध्यक्ष द्वारा सौंपे गए हैं।
3. विधेयक पर समिति अपनी रिपोर्ट निर्धारित समय पर तैयार करेगी। संसद की स्थायी समिति प्रणाली की अच्छाईयाँ निम्नलिखित हैं–
4. उनकी कार्यवाहियाँ दलगत पक्षपात से रहित है।
5. उनके द्वारा अपनाई गई क्रियाविधि लोकसभा की तुलना में अधिक लचीली है।
6. यह प्रणाली कार्यपालिका पर संसदीय नियंत्रण को अधिक विस्तृत, नजदीकी, सतत, गहरा और व्यापक बनाती है।
7. अपनी माँगों को सूत्रबद्ध करने में मंत्रालय एवं विभाग चूँकि अब अधिक सावधान रहते हैं अतः यह प्रणाली सार्वजनिक व्यय में मितव्ययिता और कुशलता सुनिश्चित करती है।
8. संसद के सभी सदस्यों से ये समितियाँ सरकारी कार्य संचालन में भाग लेने तथा उसे समझने और योगदान करने के अवसर प्रदान करती हैं।
9. अपनी रिपोर्टें तैयार करने के लिए ये विषेशज्ञों और जनता की राय ले सकती है। अपने सामने गवाही देने के लिए वे विषेशज्ञों तथा प्रतिश्ठित व्यक्तियों को बुलाने तथा अपनी रिपोर्टों में उनकी राय को षामिल करने का अधिकार रखती हैं।
10. कार्यपालिका पर वित्तीय नियंत्रण लागू करने में विपक्षी पाटियाँ और राज्यसभा अब अधिक भूमिका अदा कर सकती हैं।

KHAN GLOBAL STUDIES
Most Trusted Learning Platform
KHAN SIR

संसद द्वारा वित्तीय नियंत्रण–

1. वित्तिय नियंत्रण–बजट पारित करना–अनुच्छेद–112 के अनुसार सरकार के वार्षिक वित्तिय विवरण (बजट) को राष्ट्रपति की अनुशंसा पर संसद (लोकसभा में) के समक्ष में प्रस्तुत किया जायेगा।

(i)बजट का प्रस्तुतिकरण–फरवरी के अन्तिम दिन (28/29 फरवरी) को बजट को संसद के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। इस दिन बहस/मतदान नहीं हो सकता। वित्तमंत्री द्वारा बजट प्रस्तुत करना।

(ii)सामान्य चर्चा/बहस–इसके लिए 3 दिन का समय होता है, लेकिन मतदान नहीं हो सकता।

(iii) अनुदान की मांगों पर मतदान–इसके लिए 26 दिन का समय होता है।

(iv)लेखानुदान (Vate on account)–समयाभाव के कारण संसद में विनियोग विधेयक पारित नहीं हुआ रहता, जबकि नये वित वर्ष की शुरुआत 01 अप्रैल से हो जाती है, इसलिए सरकार को नये वित वर्ष में किये जाने वाले सम्पूर्ण बजट अनुमान का 1/6 भाग अथवा 2 महीने के खर्च की सभी अग्रिम रूप से उपलब्ध करायी जाती है। इसे ही लेखानुदान कहा जाता है।

(v) गिलोटिन–निर्धारित समयावधि में समस्त मांगों पर मतदान नहीं हो पाता है, इसलिए अन्तिम दिन सभी श्रेष्ठ अनुदान की मांगों को एक साथ सदन के पटल पर रखा जाता है और उसे पारित कर दिया जाता है। इस प्रक्रिया को गिलोटिन कहा जाता है।

(vi) कटौती प्रस्ताव–संसद सदस्य निम्नलिखित 3 प्रकार के कटौती प्रस्ताव ला सकते हैं।

(i) नीतिगत कटौती प्रस्ताव–संपूर्ण मांग को एक रुपया कर दिया जाता है।

(ii) प्रतिकात्मक कटौती प्रस्ताव (Token cut motion)–सम्पूर्ण मांग में से 100 रुपये कम कर दिया जाता है।

(iii) मितव्यतता कटौती प्रस्ताव(Economy cut motion)–एक विशेष एक मुश्त राशि कम कर दी जाती है।

(iv)वित्त विधेयक को पारित करना (Finance)

(v)विनियोग विधेयक–यह व्यय से संबंधित है।(Out going call)

<u>नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक **(CAG)**</u>–यह अंकेक्षण (Audit) करता है, क्योंकि यह संसद के लिए कार्य करता है। यह अपनी अंकेक्षण रिपोर्ट को संसद को देता है। जहाँ एक समिति होती है। जो (CAG) की रिपोर्ट की जाँच करती है।

अध्यक्षीय प्रणाली में नियंत्रण (**Control** पद **Presidential System**)–प्रशासन पर विधायी नियंत्रण की पद्धति राष्ट्रपति प्रणाली की सरकार (संयुक्त राज्य अमरिका) में संसदीय प्रणाली की सरकार (भारत और ब्रिटेन) से भिन्न होती है। अतः विधायी नियंत्रण के जिन उपायों का वर्णन ऊपर किया गया है, उनमें से अधिकांश संयुक्त राज्य अमरिका मे लागू नहीं होते। इस प्रकार की भिन्नता का कारण 'सत्ता के पृथक्करण के सिद्धान्त' में निहित है। संयुक्त राज्य अमरिका में प्रचलित राष्ट्रपति प्रणाली की सरकार इसी पर आधारित है। इसके अनुसार सरकार की कार्यपालिका और विधायिका को एक दूसरे अलग कर दिया जाता है और इसलिए वे एक दूसरे से स्वतंत्र हैं। राष्ट्रपति एवं सचिवों से निर्मित कार्यपालिका न तो विधायिक में (जिसे संयुक्त राज्य अमरिका में काँग्रेस कहते हैं) बैठती है और न ही अपनी नीतियों और अपने कार्यों के लिए इसके प्रति उत्तरदायी होती है। अमरिकी राष्ट्रपति का कार्यक्रम चार वर्ष का होता है और सामान्य परिस्थितियों में इसे इसका कार्यकाल पूरा होने से पहले नहीं हटाया जा सकता है। पद पर बने रहने के लिए राष्ट्रपति का कांग्रेस में बहुमत का होना आवश्यक नहीं। वास्तव में राष्ट्रपति और उसके सचिव न तो काँग्रेस के सदस्य होते हैं और न ही उसकी कार्यवाही में भाग लेते हैं। अतः कार्यपालिका पर कांग्रेस का नियंत्रण प्रश्नों या स्थगन प्रस्ताव से या अविश्वास या निंदा प्रस्ताव द्वारा लागू करना संभव नहीं। इन परिस्थितियों में संयुक्त राज्य अमरिका में काँग्रेस प्रशासन अपना नियंत्रण निम्नलिखित उपकरणों से लागू करती है–

(i) कांग्रेस कार्यकारी विभागों, आयागों, निकायों तथा अन्य प्रशासनिक एजेंसियों का निर्माण करती है और उनके ढाँचे, संगठन तथा उनके अधिकारों और कार्यों का निर्धारण भी यही करती है। वस्तुतः, स्वतंत्र नियामकीय आयोग राष्ट्रपति के नियंत्रण में न होने के कारण सीधे कांग्रेस को रिपोर्ट करते हैं।

(ii) प्रशासनिक विभागों और एजेंसियों की कार्यप्रणाली की जाँच पड़ताल और आलोचना करने के लिए कांग्रेस समितियों को नियुक्त करती है।

(iii) सार्वजनिक नीतियों, पद्धतियों तथा कार्यविधियों का निर्धारण करने के लिए कांग्रेस कानून बनाती या मौजूदा कानूनों को संशोधित या निरस्त करती है।

(iv) केंद्रीय (संघीय) बजट को स्वीकृति कांग्रेस देती है। इसको बजट एवं प्रबंधन कार्यालय द्वारा राष्ट्रपति के निर्देश में तैयार किया जाता है। राष्ट्रपति अपना बजट कांग्रेस में प्रस्तुत करता है और अपनी समितियों

तथा उपसमितियों के द्वारा कांग्रेस उसकी पूरी तरह से छानबीन तथा संशोधन करती है। यह लेखा तथा लेखा–परीक्षा की भी जाँच करती है।

(v) राष्ट्रपति द्वारा की गई संधियों को अनुमोदित करने का अधिकार कांग्रेस के ऊपरी सदन, सीनेट को प्राप्त है।

(vi) राष्ट्रपति की उच्च पदों पर की गई नियुक्यिों की भी पुष्टि करने का अधिकार है।

(vii)देशद्रोह अथवा भ्रष्टाचार के आधार पर राष्ट्रपति के चार वर्श का कार्यकाल पूरा होने से पहले ही उस पर महाभियोग लगाने का अधिकार भी कांग्रेस को प्राप्त है।

(viii) इसकी समितियों को संपूर्ण कांग्रेस को प्रशासनिक एजेंसियों से उनके पिछले कार्यों या भावी योजनाओं की रिपोर्ट माँगने का भी अधिकार है। एफ.ए. नीग्रो इसे 'सह संचालन का सिद्धान्त कहते हैं। जिसका अर्थ है कि प्रशासन के निर्णय निर्माण में कांग्रेस की प्रत्यक्ष भागीदारी है। इस प्रकार संयुक्त राज्य अमरिका में प्रशासन पर कांग्रेस का नियंत्रण सीमित तथा प्रकृति एवं विस्तार में प्रतिबंधित है।

सीमाएँ और अप्रभाविकता (**Limitations and Ineffectiveness**)–भारत जैसे संसदीय प्रणाली के देशों में प्रशासन के ऊपर नियंत्रण प्रणाली सैद्धान्तिक है। वास्तव में नियंत्रण इतना कारगर नहीं जितना इसे होना चाहिए। भारत में संसदीय नियंत्रण के प्रभावी न होने के निम्नलिखित कारण जिम्मेदार हैं–

(i) प्रशासन के आकार तथा जटिलता में बढ़ोत्तरी हुई है पर इसके ऊपर नियंत्रण करने के लिए संसद के पास न तो समय है और न ही विषेशज्ञता।

(ii) संसद के द्वारा वित्तीय नियंत्रण में अनुदान की माँगों की तकनीकी प्रकृति बाधक बनती है। सांसद चूँकि विषेशज्ञ नहीं होते इसलिए वे ये सब समुचित और पूरे तौर पर समझ नहीं पाते।

(iii) विधायी नेतृत्व कार्यपालिका के पास होता है और नीतियों के निर्माण में यह महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।

(iv) संसद का आकार बहुत बड़ा और अनियंत्रणीय है। अतः यह प्रभावशाली नहीं हो पाती है।

(V) संसद में कार्यपालिका को बहुमत का समर्थन प्राप्त होने से कारगर आलोचना की संभावना कम हो जाती है।

(Vi) सार्वजनिक व्यय की जाँच सार्वजनिक लेखा समिति जैसी वित्तीय समितियाँ तब करती हैं जब कार्यपालिका इन्हें व्यय कर चुकी होती है। अतः ये समितियाँ शव–परीक्षा करती हैं।

(Vii) गिलोटिन का सहारा बढ़ने से वित्तीय नियंत्रण की भूमिका घट गई है।

(viii) 'प्रदत्त विधान' में बढ़ोतरी होने से विस्तृत कानून बनाने के मामले में संसद की भूमिका कम हो गई और नौकरशाही की शक्तियाँ बढ़ गई हैं।

(ix) राष्ट्रपति द्वारा अक्सर ही 'अध्यादेश' जारी करने से संसद की विधान निर्माण की शक्ति कम हो गई है।

(x) संसद का नियंत्रण छुट–पुट, आम और अधिकतर राजनीतिक प्रकृति का है।

(xi) संसद में प्रबल और स्थिर विपक्ष के अभाव से तथा संसदीय आचरण तथा नैतिकता को चोट पहुँचाने से भारत में प्रशासन के ऊपर विधायी नियंत्रण की प्रभाव– हीनता बढ़ी है।।

पाल एच. एपलबाई भारत में प्रशासन के ऊपर संसदीय नियंत्रण की भारी आलोचना करते हैं। उनकी आलोचनाओं की सूची निम्न है–

(i) संसद सदस्य नियंत्रक और महालेखा परीक्षक के कार्यों के महत्व को बहुत बढ़ा–चढ़ा कर प्रस्तुत करते हैं और उसकी रिपोर्टों पर बहुत अधिक ध्यान देते हैं। ऐसा करके संसद हर स्तर पर लोकसेवकों के दब्बूपन को बढ़ा देती है और निर्णय लेने के उत्तरदायित्व लेने को अनिच्छुक बना देती है। उनको बाध्य करती है कि वे निर्णय धीमी गति से, संदर्भ और सम्मेलन की बोझिल प्रक्रिया से लें जिसमें अंततः प्रत्येक निर्णय लेने में हर किसी की भागदारी धुंधली हो जाती है और पर्याप्त नहीं हो पाती तथा जो होती है, वह भी बहुत धीमी होती हैं।

(ii) संसद सदस्यों के बीच इसको लेकर बहुत आम और अस्पष्ट भय समाया है कि इसके उत्तरदायित्वों को सुरक्षित नहीं रखा जा रहा है। इस तरह के भय का समर्थन संसदीय उत्तरदायित्व के उच्च स्तर से संबंधित विषयों के विधेयकों द्वारा नहीं किया जा सकता है। यहाँ संसद में सरकारी प्रस्तावों को ग्रेट ब्रिटेन की अपेक्षा कहीं अधिक बार संशोधित किया जाता है और प्रस्तावों को मूलतया संसद के बहुत छोटे हिस्से की भावनाओं का अत्यधिक ख्याल रखकर बनाया जाता है।

(iii) संसद अक्सर ही पूर्वाग्रह प्रदर्शित करती है। उदाहरण स्वरूप **1956** में व्यापारियों के निर्णय पर भरोसा।

(iv) यहाँ संसद आश्चर्यजनक रूप से छोटे पर प्रभावशाली व्यावसायिक हितों की कुछ निहित स्वार्थी माँगों पर तत्काल रियायत देने के लिए बहुत अधिक प्रवृत्त लगती है।

(v) लोकसेवा आयोग की छोटी और संकीर्ण समझ को संसद ने इस गलतफहमी में समर्थन दिया था कि यह योग्यता प्रणाली को सुदृढ़ करेगी, लेकिन दरअसल इसमें मंत्रियों की संसद की उत्तरदायित्व की भावना कमजोर होती है।

(vi) अधिकारों को सौंपने का सबसे अधिक विरोध संसद में होता है जो भारतीय प्रशासन की सबसे बड़ी कमजोरी है। संसदीय शक्तियों को महत्वपूर्ण और सकारात्मक बनाने के लिए यह जरूरी है कि संसद अपने अधिकारों को दूसरों के हवाले करें, परंतु संसद ऐसा करने में जो आनाकानी करती है उससे मंत्रिगण, सचिव और प्रबंध निर्देशक अपने–अपने अधिकारों को सौंपने से बचते हैं।

कार्यपालिका नियंत्रण

(Executive Control)

प्रशासन पर कार्यपालिका के नियंत्रण का अर्थ है–नौकरशाही की कार्यप्रणाली पर मुख्य कार्यकारी अर्थात् राजनीतिक कार्यकारी का नियंत्रण। संयुक्त राज्य अमेरिका में यह नियंत्रण राष्ट्रपति तथा उसके सचिवों द्वारा किया जाता है और भारत तथा ब्रिटेन में मंत्रिमण्डल तथा अलग–अलग मंत्रियों द्वारा।

संसदीय सरकार में मंत्रिमण्डल अपनी नीतियों एवं कार्यो के लिए संसद के प्रति उत्तरदायी होता है। अपने मंत्रालय/विभाग में सही गलत कार्यों के लिए प्रत्येक मंत्री की व्यक्तिगत जवाबदेही होती है। दूसरे शब्दों में मंत्रीपदीय उत्तरदायित्व संसदीय सरकार की मूलभूत विशेषता है। इसी कारण से राजनीतिक कार्यपालिका प्रशासन पर नियंत्रण लागू करती है।

सामान्य नियम कालिक और प्रतिवेदात्मक विधायी नियंत्रण के विपरीत कार्यकारी नियंत्रण अपनी विषयवस्तु में अधिक परिपूर्ण, स्थायी, निरंतर, प्रेरक, दोशनिवारक और निदेशात्मक होता है। कार्यपालिका प्रशासन अपना नियंत्रण निम्नलिखित उपायों से लागू करती है।

राजनीतिक निर्देशन (नीति निर्माण)–भारत में प्रशासनिक नीतियों का निर्माण मंत्रिमण्डल करता है। उसके पास उनको लागू करने के संबंध में निर्देशन, निरीक्षण और समन्वय का अधिकार होता है। एक या अधिक विभागों का प्रभारी मंत्री विभागीय नीतियों को तय करता है। प्रशासकों द्वारा उनके कार्यान्वयन को निर्देशित करता है और लेखा, निरीक्षण तथा समन्वय करता है। इस प्रकार राजनीतिक दिशा–निर्देश के द्वारा मंत्री अपने मंत्रालय/मंत्रालयों अथवा विभाग/विभागों के अधीन काम करने वाली प्रशासनिक एजेंसियों के कार्यों को नियंत्रित करता है। विभागीय अधिकारी सीधे और पूरे तौर पर मंत्री के प्रति जवाबदेह होते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका में यही कार्य राष्ट्रपति तथा उसके सचिवों द्वारा किये जाते हैं।

बजट प्रणाली–कार्यपालिका बजट के द्वारा प्रशासन पर अपना नियंत्रण लागू करती है। यह बजट तैयार करती है, उसे संसद में पारित कराती है और उनके खर्चों को पूरा करने के लिए प्रशासनिक एजेंसियों को आवष्यक धन आबंटित करती है। इस प्रकार की तमाम गतिविधियों में वित्त मंत्रालय जो भारत सरकार का प्रमुख वित्तीय संस्थान है। एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। यह बजट प्रणाली प्रशासन पर वित्तीय नियंत्रण निम्न उपायों से लागू करती है–

(i) नीतियों और कार्यक्रमों का सिद्धांततया अनुमोदन।

(ii) बजट अनुमानों की पूर्वयोजना की स्वीकृति।

(iii) प्रदत्त अधिकारों के अधीन खर्चे की स्वीकृति।

(vi) एकीकृत वित्त सलाहकार के माध्यम से वित्तीय परामर्श उपलब्ध कराना।

(v) अनुदानों का पुनर्विनियोग (एक उपशीर्ष से दूसरे में कोष का अंतरण)

(vi) आतंरिक लेखा–परीक्षा पद्धति।

(vii) व्यय करने वाले द्वारा पालन की जाने वाली वित्त संहिता निर्धारित करना।

नियुक्तियाँ एवं निष्कासन (कार्मिक प्रबंधन और नियंत्रण)–प्रशासन पर कार्यपालिका के नियंत्रण का यह सबसे प्रभावी उपाय है। कार्मिक प्रबंधन और नियंत्रण में कार्यपालिका सबसे महत्पूर्ण भूमिका अदा करती है। इसको सर्वोच्च प्रशासकों की नियुक्ति एवं निष्कासन का अधिकार प्राप्त होता है। इस काम में भारतीय कार्यपालिका का कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग, वित्त मंत्रालय और केन्द्रीय

लोकसेवा आयोग से सहायता मिलती है। भारत में कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग प्रमुख कार्मिक एजेंसी है। विभागाध्यक्षों के चयन और नियुक्ति में सर्वोच्च स्तर पर मंत्रीगण महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। अतः इस प्रकार की नियुक्तियों के द्वारा वे (मंत्री) अपने विभागों के प्रशासन पर पूरा नियंत्रण रखते हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका में भी सर्वोच्च पदों पर नियुक्तियाँ करने के लिए राष्ट्रपति को सीनेट की स्वीकृति लेनी पड़ती है, लेकिन उनको उनके पदों से हटाने का पूरा अधिकार उसको ही होता है। कार्मिक प्रबंधन एवं नियंत्रण के मामले में अमरिका के कार्मिक प्रबंधन कार्यालय (OPM) की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

प्रदत्त विधि निर्माण—इसको कार्यकारी विधि निर्माण अथवा प्रत्यायोजन विधायन भी कहते हैं। प्रशासन पर नियंत्रण लागू करने के लिए कार्यपालिका के हाथों में यह एक महत्वपूर्ण अस्त्र है। संसद कानूनों की रूपरेखा तैयार करती है और छोटे—मोटे विवरण भरने का अधिकार कार्यपालिका को दे देती है। अतः उन नियमों, विनियमों तथा उप—नियमों को कार्यपालिका बनाती है, जिनका पालन प्रशासकों द्वारा संबंधित कानून को लागू करने में करना होता है।

अध्यादेश—भारतीय संविधान संसद की मध्यावधि के दौरान मुख्य कार्यकारी अर्थात् राष्ट्रपति को अध्यादेश जारी करने का अधिकार देता है। इसका उद्देश्य उस परिस्थिति से निपटना है जो तत्काल कार्यवाही की माँग करती है। संसद के अधिनियम की तरह अध्यादेश भी उतने ही अधिकारिक और प्रभावशाली होते हैं और इसलिए ये प्रशासन के कार्यों को नियंत्रित करते हैं।

लोक सेवा संहिता—कार्यपालिका ने एक लोकसेवा संहिता को तय किया है। अपनी सरकारी शक्तियों का प्रयोग करने में प्रशासकों के लिए इनका ध्यान रखना और पालन करना आवश्यक है। इसमें आचरण संबंधी नियम होते हैं, जो प्रशासकों को अपने निजी स्वार्थों को पूरा करने के लिए अपनी शक्तियों का इस्तेमाल करने से रोकते हैं। भारत में ऐसे महत्वपूर्ण नियम निम्नलिखित हैं—

(क) अखिल भारतीय सेवा (आचरण) नियम, 1954

(ख) केंद्रीय लोकसेवा (आचरण) नियम, 1955

(ग) रेलवे सेवा (आचरण) नियम, 1956

इन नियमों का सरोकार राज्य के प्रति निष्ठा, वरिष्ठ अधिकारियों के सरकारी आदेशों के पालन, लोक सेवकों की राजनीतिक गतिविधियों, लोक सेवकों के वित्तीय लेन—देन, वैवाहिक प्रतिबंधों इत्यादि से है।

कर्मचारी एजेंसियों–कार्यपालिका प्रशासन पर अपना नियंत्रण कर्मचारी एजेंसियों के माध्यम से भी लागू करती है। भारत में महत्वपूर्ण कर्मचारी एजेंसियाँ हैं–प्रशासनिक सुधार विभाग, योजना–आयोग, मंत्रिमण्डल सचिवालय और प्रधानमंत्री कार्यालय। मूने का कथन है कि कर्मचारी एजेंसी ''कार्यपालिका के व्यक्तित्व का विस्तार है। इसका अर्थ है अधिक आँखें, अधिक कान और अधिक हाथ। ये सब उसकी व्यवस्थाओं को बनाने और लागू करने में उसकी सहायता करते हैं। अतः कर्मचारी एजेंसियाँ प्रशासनिक एजेंसियों को प्रभावित करती हैं। उन पर अप्रत्यक्ष नियंत्रण बनाए रखती हैं और उनकी नीतियों तथा कार्यक्रमों में तालमेल बिठाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

जनमत को अपील–प्रशासन प्रणाली (अर्थात् लोकसेवा या नौकरशाही) चाहे वो अमरीकी हो, ब्रिटिश अथवा भारतीय, उसका रूझान यथास्थिति बनाये रखने वाला होता है। अतः वह परिवर्तन का विरोध करती है। यह कार्यपालिका द्वारा बनाई गई नीतियों, योजनाओं, कार्यक्रमों तथा परियोजनाओं को सकारात्क मस्तिष्क से नहीं लेतीं। वास्तव में, प्रशासन तंत्र के विभिन्न अंग, फिफनर और प्रेस्थम के शब्दों में विधायिका और प्रेभावी समूहों से गठजोड़ करके और सामान्यजन के विरुद्ध अभियानों का सोचा–समझा नपा–तुला समर्थन देकर दूसरी एजेंसियों के मुकाबले अपनी स्थिति को सुदृढ़ करने की कोशिश करते हैं। वे ऐसा न केवल कार्यक्रम के क्षेत्र में, बल्कि समान रूप से काम करने की उन स्थापित पद्धतियों में निहित स्वार्थ विकसित कर लेते हैं जो नौकरशाही की आत्मकेन्द्रित और महत्वपूर्ण स्थिति में बढ़ोतरी करती है।'' अतः नौकरशाही नए कार्यक्रमों तथा पद्धतियों का प्रतिरोध करती है। क्योंकि इनसे उनकी (नौकरशाही) मजबूत स्थिति को खतरा पैदा होता है।

न्यायिक नियंत्रण (**Judicial Control**)–प्रशासन पर न्यायालयों के नियंत्रण को न्यायिक नियंत्रण कहते हैं। दूसरे शब्दों में प्रशासनिक कार्यों को कानून की सीमाओं में रखने का अधिकार न्यायालय को है। इसका अर्थ यह भी है कि प्रशासकों के गलत कार्य से पीड़ित कोई भी नागरिक न्यायालय में चुनौती देने का अधिकार रखता है। प्रशासन पर न्यायिक नियंत्रण का मुख्य उद्देश्य प्रशासनिक कार्यों की वैधानिकता को सुनिश्चित करके नागरिकों के अधिकारों एवं उनकी स्वतंत्रताओं की रक्षा करना है।

एस. पी. शर्मा–ने सही ही कहा था, ''न्यायालयों का काम नागरिकों की स्वतंत्रताओं और उनके अधिकारों की रक्षा करना है। अतः उनके दृष्टिकोण से न्यायालयों द्वारा लागू नियंत्रण, 'न्यायिक उपचार कहलाते हैं। वास्तविकता यह है कि न्यायालयों के समक्ष सरकारी जवाबदेही और सरकारी ज्यादतियों या सत्ता के दुरूपयोग के विरुद्ध नागरिकों के लिए 'न्यायिक उपचार ये दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

आधार (**Basis**)–प्रशासन पर न्यायिक नियंत्रण 'कानून का शासन' की अवधारणा से निकलता है जो ब्रिटिश और भारतीय, दोनों संविधानों की आधारभूत विशेषता है। ब्रिटिश संवैधानिक विद्वान ए.वी. डायसी अपनी विख्यात पुस्तक 'इंट्रोडक्शन टू द स्टडी ऑफ द लॉ ऑफ द कॉन्सटीट्यूशन में इस अवधारणा की शास्त्रीय व्याख्या प्रस्तुत करते हैं।

''कोई भी व्यक्ति दंडनीय नहीं है या किसी भी व्यक्ति का कानूनी तौर पर जान या माल का नुकसान नहीं किया जा सकता है, सिवा इसके कि उसने देश के आम न्यायालय के सम्मुख आम कानूनी ढंग से स्थापित कानून को साफ–साफ तोड़ा हो। कोई व्यक्ति कानूने से ऊपर नहीं लेकिन ....प्रत्येक व्यक्ति चाहे उसका पद या स्थिति कुछ भी हो, सामान्य कानून के क्षेत्र के अधीन है और सामान्य न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र के प्रति उत्तरदायी है। कानूनी औचित्य के बिना किए गए प्रत्येक कार्य के लिए प्रधानमंत्री से लेकर एक सिपाही या कर संग्राहक उसी उत्तरदायित्व के अंतर्गत हैं, जिसके कोई अन्य नागरिक।संक्षेप में 'कानून के शासन' के तीन तत्व ये हैं–

(i) निरंकुशसत्ता की अनुपस्थिति–अर्थात् किसी भी व्यक्ति को कानून तोड़ने के कार्य के सिवा दंडित नहीं किया जा सकता।

(ii) कानून के समक्ष समानता,–अर्थात् सामान्य न्यायालयों द्वारा लागू देश के सामान्य कानून के प्रति सभी नागरिकों (गरीब या अमीर, ऊँचा या नीचा सरकारी अधिकारी या सामान्य जन) की समान अधीनता।

(iii) व्यक्ति के अधिकारों की प्रमुखता, अर्थात् संविधान व्यक्ति के अधिकारों का स्रोत नहीं, बल्कि यह व्यक्ति के उन अधिकारों का परिणाम है, जिनको न्यायालयों द्वारा परिभाशित और लागू किया गया है। अतः ग्रेट ब्रिटेन में नागरिकों के अधिकार संविधान से नहीं, बल्कि न्यायिक निर्णयों से प्रवाहित होते हैं।

न्यायिक नियंत्रण का आधार(Grounds)–प्रशासनिक कार्यों में न्यायापालिका निम्नलिखित परिस्थितियों में हस्तक्षेप कर सकती है।

(i) अधिकार क्षेत्र का अभाव–अर्थात् प्रशासक जब अधिकार के बिना या उसके अपने अधिकार क्षेत्र से परे या अपने अधिकार क्षेत्र की भौगोलिक सीमाओं के बाहर जा कर काम करता है। तकनीकी तौर पर इसे 'अधिकार की अति' (Over feasance) कहते हैं।

(ii) कानून की चूक–अर्थात् प्रशासक जब कानून की गलत व्याख्या करता और इस प्रकार नागरिक पर वे भार थोपता है जो कानून की विषयवस्तु द्वारा

अपेक्षित नहीं। तकनीकी तौर पर इसे 'अधिकार' की भ्रांति (Misfeasance) कहते हैं।

(iii) तथ्यों का पता लगाने में गलती–अर्थात् प्रशासक जब तथ्यों की खोज करने में भूल करता है और गलत धारणाओं के आधार पर काम करता है।

(iv) अधिकार का दुरुपयोग–अर्थात् प्रशासक बदले की भावना से किसी व्यक्ति को नुकसान पहुँचाने के लिए जब अपने अधिकार (शक्ति या विवेक) का दुरुपयोग करता है। तकनीकी तौर पर इसे 'दुर–अधिकार' (Mal feasance) कहा जाता है।

(v) कार्यविधि की गलती अर्थात् प्रशासक जब निर्धारित कार्यविधि का पालन नहीं करता।

प्रशासनिक कार्यों में उपरोक्त प्रकार के मामलों से प्रभावित नागरिक न्यायपालिका के हस्तक्षेप की माँग कर सकते हैं।

पद्धतियाँ (**Methods**)–प्रशासन पर अपना नियंत्रण न्यायपालिका निम्नलिखित पद्धतियों से लागू करती है।

न्यायिक पुनरावलोकन–यह न्यायालयों का अधिकार है। वे प्रशासनिक कार्यों की वैधानिकता तथा संवैधानिकता पर पुनर्विचार कर सकते हैं। जाँच के बाद अगर वे पाते हैं कि ये कार्य संविधान का उल्लंघन करते हैं, तो न्यायालयों द्वारा उनको गैर कानूनी, असंवैधानिक और अमान्य घोषित किया जा सकता है। न्यायकि पुनरावलोकन का कार्यक्षेत्र ब्रिटेन की तुलना में संयुक्त राज्य अमेरिका में कहीं अधिक व्यापक है। संवैधानिक एंव वैधानिक सीमाओं, (न्यायिक पुनर्विचार के कार्यक्षेत्र के मामले में) के कारण भारत इन दोनों के बीच आता है।

वैधानिक अपील–संसदीय विधान (अर्थात् कोई कानून या अधिनियम) में ही यह प्रावधान हो सकता है, कि विशेष प्रकार के प्रशासनिक कार्य में, पीड़ित नागरिक को न्यायालयों में अपील करने का अधिकार होगा। इन हालात में वैधानिक अपील की जा सकती है।

सरकार के विरुद्ध दावे–राज्य की योग्यता का निर्धारण भारतीय संविधान की धारा 300 करती है। इसमें कहा गया है कि क्रमशः संसद तथा राज्य विधानसभाओं द्वारा बनाये गए कानूनों के प्रावधानों के अधीन केंद्र तथा राज्य सरकारों पर दावा किया जा सकता है। राज्य अनुबंध के मामले में दावा किये जाने योग्य है। इसका अर्थ है कि अनुबन्ध के मामले में केंद्र सरकार और राज्य सरकारों की जिम्मेदारी उतनी ही है जितनी कि अनुबंध

के सामान्य कानून के अधीन किसी व्यक्ति की। परंतु क्षति (Tort) के मामले में स्थिति भिन्न हैं। इसमें राज्य के राजकीय और अराजकीय कार्यों में अंतर किया जाता है। अपने कर्मचारियों के क्षति पहुँचाने वाले कार्यों के लिए सरकार पर केवल अराजकीय कार्यों के मामले में दावा किया जा सकता है।

संयुक्त राज्य अमरिका में, कुछ अपवादों को छोड़, क्षति (Torts) संबंधी मामलों में राज्य के विरुद्ध पर दावा नहीं किया जा सकता। अन्य शब्दों में राज्य (चाहे वो संघीय सरकार हो अथवा राज्य सरकार) कुछ मामलों के अतिरिक्त अपने कर्मचारियों की क्षति करने के उत्तरदायित्व से मुक्त है। फ्रांस में Droit Administrait की प्रणाली लागू है। वहाँ राज्य अपने कर्मचारियों के सरकारी कामों की जिम्मेदारी लेता और नागरिकों द्वारा उठाये गए नुकसान की भरपाई करता है। पीड़ित नागरिक राज्य प्रशासनिक न्यायालयों' में सीधे दावा कर सकते हैं और क्षतिपूर्ति पा सकते हैं।

सरकारी अधिकारियों के विरुद्ध दावे–भारत में अपने सरकारी कार्यों के लिए राष्ट्रपति तथा राज्यपाल वैधानिक उत्तरदायित्व मुक्त हैं। उनके कार्यकाल के दौरान, उनके निजी कार्यों तक के मामले में उनको आपराधिक कार्यवाहियों से मुक्ति मिली हुई है। उनको न तो गिरफ्तार किया जा सकता है, न ही जेल में बंद, परन्तु उनके निजी कृत्यों के मामले में कार्यकाल के दौरान दो महीने का नोटिस देकर उनके विरुद्ध दीवानी मामाला में मुकदमा दायर किया जा सकता है। इस प्रकार की मुक्ति मंत्रियों को नहीं प्राप्त है। अतः अपराधों तथा Torts के लिए भी सामान्य न्यायालयों में आम नागरिकों की तरह मंत्रियों पर भी दावा दायर किया जा सकता है।

1850 के न्यायिक अधिकारी सुरक्षा अधिनियम के अधीन अपने कार्यों के संबंध में न्यायिक अधिकारी प्रत्येक जवाबदेही से मुक्त हैं, इसलिए उन पर दावा नहीं किया जा सकता है। भारतीय संविधन की अनुच्छेद 294 के द्वारा सरकारी अनुबंधों के लिए लोक सेवकों पर मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है। अन्य मामलों में अधिकारियों का उत्तरदायित्व आम नागरिक जैसा ही है। उनके द्वारा सरकारी हैसियत से किए गए कामों के लिए उन पर दीवानी कार्यवाही दो महीने का नोटिस देकर की जा सकती है। जहाँ तक आपराधिक उत्तदायित्वों का संबंध है, उनके द्वारा सरकारी हैसियत से किए गये किसी कामों के लिए उनके विरुद्ध कार्यवाही सरकार से पूर्व अनुमति लेकर की जा सकती है।

ब्रिटेन में सम्राट और अमरीकी राष्ट्रपति भी वैधानिक उत्तरदायित्व से मुक्त रखे गए हैं। ब्रिटेन में इस मुहावरे को कानूनी मान्यता प्राप्त है। 'राजा कुछ गलत नहीं कर सकता' अतः किसी न्यायालय में उस पर दावा नहीं ठोका जा सकता है।

असाधारण उपचार–ये न्यायालयों द्वारा जारी 6 प्रकार के समादेश (Writs) होते हैं।

1. बंदी प्रत्यक्षीकरण (Habeas-Corpus)–इसका शाब्दिक अर्थ होता है 'सशरीर उपस्थित करना' न्यायालय द्वारा यह आदेश उस व्यक्ति को जारी किया जाता है, जिसने किसी को रोक या बंदी बना रखा हो, ताकि पहले वाला व्यक्ति दूसरे को न्यायालय में सशरीर प्रस्तुत करे। अगर नजरबंदी को गैर कानूनी पाया जाता है, तो न्यायालय उस बंदी व्यक्ति को रिहा कर देगा। यह समादेश मनमानी नजरबंदी के विरुद्ध व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा है।

2. परमादेश (**Mandamus**)–इसका शाब्दिक अर्थ है 'हमारा आदेश'। यह आदेश न्यायालय द्वारा सरकारी अधिकारी को वह सरकारी काम करने को दिया जाता है, जिनको करने में वह विफल रहा है।

3. निषेध (**Probhibition**)–इसका शाब्दिक अर्थ है 'रोकना'। यह उच्चतर न्यायालय द्वारा निचले न्यायालय को तब जारी किया जाता है जब वह अपने अधिकार क्षेत्र के बाहर जाता है। यह केवल न्यायिक तथा अर्धन्यायिक अधिकारियों विरुद्ध ही जारी किया जाता है, प्रशासनिक अधिकारियों के लिए नहीं।
4. उत्प्रेषण लेख (**Certiorari**)–इसका शाब्दिक अर्थ है 'प्रमाणित होना' यह उच्चतर न्यायालय द्वारा निचले न्यायालय को उसके पास लंबित पड़े किसी वाद की कार्यवाही के अभिलेखों को स्थानांतरित करने के लिए जारी किया जाता है, ताकि उसकी कार्यवाही की वैधानिकता का निर्धारण किया जा सके या उनको उससे अधिक परिपूर्ण एवं संतोषजनक ढंग से पूरा किया जा सके जितना निचले न्यायालय में नहीं किया जा सकता है। अतः जहाँ निषेध केवल रोधक है, यह रोधक और रोग निवारक दोनों हैं। निषेध की तरह इसको भी केवल न्यायिक और अर्ध न्यायिक अधिकारियों के विरुद्ध जारी किया जा सकता है। प्रशासनिक अधिकारियों को नहीं।
5. अधिकार–पृच्छा(**Quo-warranto**)–इसका शाब्दिक अर्थ है 'किस अधिकार अथवा वारंट से'। न्यायालयों द्वारा इसे किसी व्यक्ति के सरकारी कार्यालय

के दावे की वैधानिकता को जानने के लिए किया जाता है। अतः यह किसी व्यक्ति द्वारा सरकारी कार्यालय पर गैर कानूनी ढंग से कब्जा करने से रोकता है।

6. निषेधाज्ञा (**Injunction**)–यह न्यायालय द्वारा किसी व्यक्ति से कोई काम करने या उससे से दूर रहने के लिए कहने को जारी की जाती है। यह दो प्रकार की होती है। आदेशात्मक और निरोधक। आदेशात्मक निषेधाज्ञा परमादेश की रिट सी लगती है। पर यह भिन्न होती है। एम. पी0 शर्मा के अनुसार, ''परमादेश को किसी गैर सरकारी व्यक्ति के विरुद्ध जारी नहीं किया जा सकता, जबकि निषेधाज्ञा मुख्यतः गैर सरकारी कानूनी प्रक्रिया है।

भारत में समादेश (**Writs in India**)–इस संदर्भ में निम्नलिखित बिंदुओं पर ध्यान दिया जा सकता है–

1. न्यायालय उपरोक्त तमाम समादेश जारी कर सकते हैं, परन्तु संविधान में केवल पहले पाँच का उल्लेख है।
2. संविधान की धारा 32 ने सर्वोच्च न्यायालय को नागरिकों के मूलभूत अधिकारों को लागू करने के लिए समादेश जारी करने का अधिकार दिया हैं ये मूलभूत अधिकार संविधान द्वारा स्वीकृत हैं।
3. संविधान की धारा 226 उच्च न्यायालयों को यह अधिकार देती है कि वे समादेशों को न केवल संविधान द्वारा आश्वासित नागरिकों के मूल अधिकारों को लागू करने, बल्कि अन्य उद्देश्यों के लिए भी जारी कर सकते हैं।
4. न्यायालय समादेशों को न केवल व्यक्तियों के बल्कि भारत सरकार के विरुद्ध भी जारी कर सकते हैं। दूसरी ओर ब्रिटेन में न्यायालय समादेश केवल व्यक्तियों के विरुद्ध जारी कर सकते हैं। सरकार के नहीं। भारत में उनको विधायिका के विरुद्ध जारी नहीं किया जा सकता है।

<u>सीमाएँ(**Limitations**)</u>–निम्नलिखित कारण प्रशासन पर न्यायिक नियंत्रण की प्रभावशीलता को सीमित करते हैं–

(i) न्यायपालिका प्रशासनिक कार्यों में स्वयं हस्तक्षेप नहीं कर सकती। न्यायालय तभी हस्तक्षेप करती है, जब कोई पीड़ित नागरिक मामले को उनके सामने लाता है। अतः न्यायपालिका के पास अपने से कार्यवाही (Suo moto)का अधिकार नहीं होता।

(ii) न्यायालयों द्वारा लागू किया गया नियंत्रण अपनी प्रकृति से शवपरीक्षा नियंत्रण होता है। अर्थात् यह तभी हस्तक्षेप करते हैं, जब प्रशासनिक कार्यों से नागरिक को नुकसान हो चुका होता है।

(iii) प्रशासन के सारे कार्य न्यायिक नियंत्रण के अधीन नहीं होते, क्योंकि संसद कुछ मामलों को न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र से बाहर कर सकती है।

(iv) स्व–त्यागी अध्यादेश, अर्थात् कुछ मामले न्यायपालिका अपने अधिकार क्षेत्र से खुद बाहर कर देती है। स्वयं ही हस्तक्षेप करने से इनकार कर देते हैं।

(v) न्यायिक प्रक्रिया बहुत धीमी और बोझिल होने के साथ–साथ महँगी है।

(vi) न्यायाधीश विधि विशेषज्ञ होते हैं, अतः वे प्रशासनिक खर्चों की अत्यन्त तकनीकी प्रकृति को पूरे और समुचित तौर पर समझ नहीं पाते।

(vii) राज्य के कल्याणकारी रुझान के चलते प्रशासन का आकार, उसकी विविधता तथा जटिलता बढ़ गई है। अतः न्यायालय प्रशासन उन सभी कार्यों की समीक्षा नही कर सकते जो नागरिक को प्रभावित करता है।

नागरिक और प्रशासन

(Citizen and Administration)

जनकल्याण हेतु कार्य करना आधुनिक जनतांत्रिक राज्यों की विशेषता है। अतः राष्ट्र के सामाजिक–आर्थिक विकास में सरकार एक महत्पूर्ण भूमिका अदा करने लगी है। इसके परिणामस्वरूप नौकरशाही का विस्तार हुआ है और प्रशासनिक प्रक्रिया में कई गुना बढ़ोतरी हुई है, जिसके चलते सरकार के विभिन्न स्तरों पर लोकसेवकों की सत्ता और उनके विवेकाधिकार बढ़ गए हैं। लोक सेवकों द्वारा इस सत्ता और विवेकाधिकारों के दुरुपयोग ने उत्पीड़न, अनाचार, कुप्रशासन तथा भ्रष्टाचार के विरुद्ध नागरिकों की शिकायतें पैदा हो जाती है। जनतंत्र की सफलता और सामाजिक–आर्थिक विकास का साकार होना नागरिकों की शिकायतों के समाधान होने की सीमा पर निर्भर है। अतः इन शिकायतों का निपटारा करने के लिए दुनिया के विभिन्न भागों में निम्नलिखित संस्थागत उपायों को विकसित किया गया है।

- ऑम्बुड्समैन पद्धति (Ombudsman System)
- प्रशासनिक न्यायालय पद्धति (The Adiministrative Court System)
- मुख्तार पद्धति (The Procurator System)।

नागरिकों की शिकायतों का निपटारा करने के लिए दुनिया की सर्वप्रथम जनतांत्रिक संस्था स्केंडिनेवियन इंस्टीट्यूशन ऑफ ऑम्बुड्समैन थी। अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वान डोनेल्ड सी. रोवार के अनुसार, 'प्रशासन के अनुचित कार्यों के बारे में एक औसत नागरिकों की शिकायतों का निपटारा करने के लिए (यह) एक अद्वितीय रूप से उपयुक्त संस्था है।''

ऑम्बुड्समैन की संस्था का निर्माण सर्वप्रथम स्वीडन में 1809 में हुआ था। 'आम्बुड' स्वीडिश भाषा का शब्द है। इसका अर्थ किसी अन्य व्यक्ति के प्रतिनिधि या प्रवक्ता के रूप में काम करना है। डोनेल्ड सी. रोवार के अनुसार ''ऑम्बुड्समैन वह अधिकारी है, जिसकी नियुक्ति प्रशासन और न्यायिक कार्यों के विरुद्ध शिकायतों को निपटाने के लिए विधायिका द्वारा की जाती है।

स्वीडन का ऑम्बुड्समैन नागरिकों के निम्नलिखित मामलों की शिकायतों का निपटारा करता है–

(i) प्रशासनिक विवेकाधिकार, अर्थात् सरकारी सत्ता तथा अधिकार का दुरुपयोग।

(ii) कुप्रशासन, अर्थात् लक्ष्यों को प्राप्त करने में अकुशलता।

(iii) प्रशासनिक भ्रष्टाचार, अर्थात् काम करने के लिए घूस की माँग।

(iv) भाई–भतीजावाद, अर्थात् रोजगार इत्यादि दिलाने के मामलों में अपने सगे–संबंधियों का पक्ष लेना।

(v) अशिष्टता अर्थात् विभिन्न प्रकार का अभद्र व्यवहार जैसे गाली देना।

स्वीडन में ऑम्बुड्समैन की नियुक्ति संसद द्वारा चार वर्ष के कार्यकाल के लिए की जाती है। उसको केवल संसद द्वारा उस पर विश्वास समाप्त होने के आधार पर हटाया जा सकता है। वह अपनी वार्षिक रिपोर्ट संसद में प्रस्तुत करता है, अतः उसको 'संसदीय ऑम्बुड्समैन' भी कहा जाता है। लेकिन वह संसद अर्थात् विधायिका तथा कार्यपालिका एवं न्यायपालिका से स्वतंत्र होता है।

ऑम्बुड्समैन एक संवैधानिक पद है और उसको सरकारी अधिकारियों द्वारा कानूनों तथा विनियमों के अनुपालन की देखरेख में करने तथा यह देखने का अधिकार प्राप्त है कि वे अपने कर्त्तव्यों का पालन उचित रूप से करते हैं। दूसरे शब्दों में वह सभी सरकारी अधिकारियों–सिविल, न्यायिक तथा सैनिक पर नजर रखता है, ताकि वे निष्पक्षता के साथ, वस्तुगत और कानून के अनुसार काम करें। परंतु वह किसी निर्णय को उलटने या रद्द करने का अधिकार नहीं रखता और प्रशासन अथवा न्यायालयों पर उसका कोई सीधा नियंत्रण नहीं होता।

ऑम्बुड्समैन अपनी कार्यवाही किसी अनुचित प्रशासनिक कार्य के विरुद्ध नागरिक से प्राप्त शिकायत के आधार पर या अपनी पहल पर कर सकता है। वह न्यायाधीशों सहित किसी भी पथभ्रष्ट अधिकारी पर मुकदमा चला सकता है। वह खुद सजा नहीं दे सकता। उसका काम मामले को उच्चाधिकारियों तक पहुँचाना है, ताकि वे आवश्यक दोषनिवारक कदम उठाएँ। संक्षेप में, स्वीडन की ऑम्बुड्समैन संस्था की विशेषताएँ निम्न हैं–

(i) कार्यपालिका से स्वाधीन कार्यवाही।

(ii) शिकायतों की निष्पक्ष और वस्तुगत जाँच।

(iii) जाँच शुरू करने को पहल करने का अधिकार।

(iv) प्रशासन की सभी फाइलों तक बिना रोक–टोक के पहुँच।

(v) कार्यपालिका के विपरीत संसद को रिपोर्ट करने का अधिकार। आम्बुड्समैन संस्था विधायिका के प्रति कार्यपालिका की जवाबदेही के सिद्धान्त पर आधारित है।

(vi) इसके कार्यों को मीडिया इत्यादि में व्यापक रूप से प्रचारित किया जाता है।

KHAN GLOBAL STUDIES Most Trusted Learning Platform KHAN SIR

(vii) शिकायतों से निपटने का सीधा, सरल, अनौपचारिक, सस्ता और शीघ्र है।

ऑम्बुड्समैन की यह संस्था स्वीडन से अन्य स्कॅंडिनेवियन देशों में फैल गई। जैसे कि फिनलैण्ड (1919), डेनमार्क (1955) और नार्वे (1962)। दुनियाभर के राष्ट्रमंडल देशों में इस व्यवस्था को सबसे पहले 1962 में न्यूलीलैंड ने जाँच के संसदीय आयोग (Parliament Commission for Investigation) के रूप में अपनाया। ग्रेट ब्रिटेन ने ऑम्बुड्समैन की तरह की एक संस्था को 1967 में स्थापित किया जिसको प्रशासन का संसदीय आयुक्त (Parlimentary Commissioner for Administration) कहा जाता है। तब से इस तरह की संस्था को दुनिया के 40 से अधिक देशों ने अपनाया है, जिनके नाम और कार्य भिन्न हैं। भारत में ऑम्बुड्समैन को लोकपाल/लोकायुक्त कहा गया हैं डोनेल्ड सी. रोवाट कहते हैं कि यह ''नौकरशाही के आंतक के विरुद्ध जनतांत्रिक सरकार की दीवार है। ''जबकि गेराल्ड ई. कायडेन ने इसको, ''संस्थागत जनविवेक (Institutionalized Public Conscience) कहा है।

प्रशासनिक अधिकारियों के विरुद्ध नागरिकों की शिकायतों का निपटारा करने के लिए फ्रांस ने एक विलक्षण संस्थानात्मक युक्ति निकाली है। यह है प्रशासनिक न्यायालयों की फ्रांसीसी प्रणाली (French system of Administrative courts) फ्रांस में इसकी सफलता के कारण यह यूरोप और अफ्रीका के ग्रीस और टर्की जैसे दशों में फैल गया है।

नागरिकों की शिकायतों को निपटाने के लिए पूर्व सोवियत संघ, चीन, पोलैंड, हंगरी, चेकोस्लोवाकिया और रोमानिया जैसे समाजवादी देशों ने अपनी संस्थागत युक्तियों का निर्माण किया है। इन देशों में इसे मुख्तार या (Procurator) पद्धति कहा जाता है।

KHAN GLOBAL STUDIES Most Trusted Learning Platform KHAN SIR

भारत में मशीनरी

(Machinery in India)

नागरिकों की शिकायतों को निपटाने और भ्रष्टाचार रोकने के लिए भारत में विद्यमान वैधानिक एवं संस्थागत ढाँचा निम्नलिखित तरीके से निर्मित हैं–

- लोक सेवक (जाँच) अधिनियम, 1850
- भारतीय दंड संहिता, 1860
- विशेष पुलिस संस्थापन 1941
- दिल्ली पुलिस संस्थान अधिनियम, 1946
- भ्रष्टाचार निरोध अधिनियम, 1947
- जाँच आयोग अधिनियम, 1952 (राजनैतिक नेताओं तथा प्रतिष्ठित लोकसेवकों के लिए)
- अखिल भारतीय सेवा (आचरण) नियम, 1954
- केंद्रीय लोकसेवा (आचरण) नियम, 1955
- रेलवे सेवा (आचरण), नियम 1956
- मंत्रालयों/विभागों में सतर्कता संगठन, संबद्ध एवं अधीनस्थ कार्यालय तथा सार्वजनिक प्रतिष्ठान।
- केंद्रीय सतर्कता आयोग, 1964
- राज्य सतर्कता आयोग, 1964
- राज्यों के भ्रष्टाचार निरोधक
- राज्यों में लोकायुक्त (ऑम्बुड्समैन)
- मंडलीय सतर्कता आयोग
- जिला सतर्कता आयोग
- राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद एवं निपटान आयोग
- सर्वोच्च न्यायायलय एवं राज्यों में उच्च न्यायालय
- प्रशासनिक ट्रायब्यूनल (अर्ध–न्यायिक निकाय)
- मंत्रिपरिषद सचिवालय का जन शिकायत निदेशालय 1988
- संसद और इसकी समितियाँ

केरल जैसे कुछ राज्यों में 'फील्ड टु फील्ड' कार्यक्रम। इस नई योजना में प्रशासक गाँवों/क्षेत्रों में जाते हैं, लोगों की शिकायतें सुनते और जहाँ कहीं संभव होता है, तत्काल कार्यवाही करते हैं।

केंद्रीय जाँच ब्यूरों (Central Bureau of Investigation)–केन्द्रीय जाँच ब्यूरो (CBI) की स्थापना 1963 में गृहमंत्रालय के प्रस्ताव पर की गई थी। आजकल यह कार्मिक मंत्रालय के अंतर्गत है और इसको संबद्ध कार्यालय का दर्जा प्राप्त है। 1941 में गठित विषेश पुलिस संस्थापन (जो सतर्कता के मामले देखता था) को

KHAN GLOBAL STUDIES Most Trusted Learning Platform KHAN SIR

भी (CBI) में मिला दिया गया। (CBI) केंद्रीय सरकार की मुख्य जाँच एजेंसी है। भ्रष्टाचार रोकने और प्रशासन की ईमानदारी बनाए रखने में यह महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह केन्द्रीय सतर्कता आयोग की भी सहायता करती है।

CBI के कार्य निम्नलिखित हैं–

(i) केन्द्र सरकार के कर्मचारियों के भ्रष्टाचार, घूसखोरी और दुराचार के मामलों की जाँच

करना।

(ii) राजकोषीय एवं आर्थिक कानूनों के उल्लंघन, अर्थात् आयात–निर्यात नियंत्रण, तटकर, अ

केन्द्रीय उत्पाद शुल्क, आयकर, विदेशी मुद्रा विनियम इत्यादि संबंधी कानूनों को तोड़ने

से संबंधित मामलों की जाँच, ऐसे मामलों को या तो संबंद्ध विभाग की सलाह से या

उसके अनुरोध पर लिया जाएगा।

(iii) पेशेवर अपराधियों के संगठित गिरोहों के जिनकी राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय शाखाएँ हों,

उन गंभीर अपराधों की जाँच करना।

(iv) भ्रष्टाचार विरोधीएजेंसियों तथा विभिन्न राज्यों के पुलिस बल की गतिविधियों में तालमेल बिठाना।

(v) राज्य सरकार के अनुरोध पर किसी भी सार्वजनिक महत्व के मामले की जाँच करना।

(vi) अपराधों के आँकड़े रखना और अपराधिक सूचनाओं को प्रसारित करना।

KHAN GLOBAL STUDIES
Most Trusted Learning Platform
KHAN SIR

संथानम समिति रिपोर्ट–

इस भ्रष्टाचार निरोधक समिति की नियुक्ति भारत सरकार ने 1962 में की थी। इसके अध्यक्ष के. संथानम थे तथा चार अन्य सांसदों के साथ दो वरिष्ठ अधिकारी इसके सदस्य थे। इसे भारत सरकार के विभागों में भ्रष्टाचार के विभिन्न पक्षों की जाँच–पड़ताल करने तथा इस पर रोक लगाने के उपायों की सिफारिश करने का दायित्व सौंपा गया था। परंतु राजनीतिक भ्रष्टाचार (अर्थात मंत्रिमण्डल स्तर के भ्रष्टाचार) के विषय को इसके विचारार्थ विषयों से अलग रखा गया था। संथानम समिति ने अपनी रिपोर्ट 1964 में पेश की। इसमें कहा गया था कि लोक सेवकों को प्राप्त विवेकाधिकार उत्पीड़न, दुराचार और भ्रष्टाचार पैदा करते हैं। समिति ने 137 सिफारिशें की थीं, जिनमें से सरकार ने 106 को स्वीकार किया इसकी प्रमुख सिफारिशें निम्नलिखित हैं–

(i) संविधान की धारा 311 में इस तरह से संशोधन किया जाए कि भ्रष्टाचार के मामलों में न्यायिक प्रक्रिया आसान हो और इसे जल्दी बढ़ाया जा सके। इस धारा को 1976 में संशोधित किया गया।

(ii) भारत प्रतिरक्षा विधेयक, 1962 में संशोधन ।

(iii) स्वतंत्र सतर्कता आयोग का गठन किया जाए। यह 1964 में गठित किया गया।

(iv) सरकारी कर्मचारियों के आचरण नियमों में संशोधन हो, ताकि सेवानिवृत्त लोक सेवकों को निजी क्षेत्र में जाने से रोका जा सके। इसमें सिफारिश की थी कि सरकारी कर्मचारियों पर सेवानिवृत्त के बाद दो साल तक निजी क्षेत्र में नौकरी करने पर रोक लगाई जाए।

(v) भारतीय दण्ड संहिता के धारा 21 में संशोधन, ताकि 'लोकसेवक' की परिभाषा को अधिक स्पष्ट किया जा सके। इसके लोक सेवकों के कुछ अधिक प्रवर्गों को शामिल करने के लिए इसे 1964 में संशोधित किया गया।

(vi) भ्रष्ट आचरण करने के अवसरों को समाप्त करने के लिए कानूनों, नियमों, कार्यविधियों तथा प्रक्रियाओं को आसान बनाए जाए।

(vii) कर्मियों और अधिकारों में बढ़ोतरी करके विशेष पुलिस संस्थापना को सुदृढ़ किया जाए। इसको अतिरिक्त अधिकार देकर सुदृढ़ किया गया।

(viii) सार्वजनिक प्रतिष्ठानों में सतर्कता तंत्र की स्थापना।

(ix) लोक सेवकों, मंत्रियों और विधायकों द्वारा अपने निजी संपत्ति की घोषणा।

(x) मंत्रियों के लिए आचरण संहिता बनाई जाए। बाद में ऐसी संहिता को मंत्रिमण्डल के द्वारा स्वीकार कर लिया गया।

(xi) राजनीतिक दलों को उस पैसे और चंदों का हिसाब–किताब रखना और उसे प्रकाशित करना चाहिए। जो वे निजी क्षेत्र से एकत्र करते हैं।

(xii) न्यूजीलैण्ड के संसदीय जाँच आयोग की तर्ज पर ऑम्बड्समैन की तरह की संस्था स्थापना की जाए।

(xiii) मंत्रालयों/विभागों में सतर्कता संगठनों को मजबूत किया जाए।

(xiv) अनुशासनात्मक नियमों के संबंध में इसने यह सिफारिश की कि यदि किसी व्यक्ति की ईमानदारी पर संदेह तो उसकी पूरी या आंशिक पेंशन को वापास लिया जाए, 25 वर्ष की सेवा या 50 वर्ष की आयु पूरी करने पर जो भी पहले हो अनिवार्य सेवानिवृत्त कर दिया जाए।

KHAN GLOBAL STUDIES
Most Trusted Learning Platform
KHAN SIR

केन्द्रीय सतर्कता आयोग (CVC)

इसकी स्थापना 1964 में संथानम समिति की सिफारिश की गई थी। इसका गठन केद्र सरकार के कार्यकारी प्रस्ताव द्वारा किया गया। मूलतया यह न तो कई संवैधानिक संगठन था और न ही वैधानिक।

हाल ही में, 1998में केन्द्र सरकार एक अध्यादेश जारी करके CVC को वैधानिक दर्जा दे दिया। अध्यादेश में एक बहु–सदस्यीय आयोग का गठन करने को कहा गया है, जिसका प्रमुख केंद्रीय सतर्कता आयुक्त हो और इसके सहायकों के तौर पर अधिक से अधिक तीन सतर्कता आयुक्त हों। इनकी नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा उच्च स्तरीय समिति की सिफारिश पर की जाएगी, जिसके अध्यक्ष प्रधानमंत्री और गृहमंत्री तथा सदस्य लोकसभा में विरोधी दल के नेता होंगे। जबकि सतर्कता आयुक्तों का 3 वर्श, परन्तु उनकी आयु 65 वर्ष से अधिक नहीं होनी चाहिए।

अगस्त 1998 से पूर्व CVC एक सदस्यीय आयोग था, जिसका प्रधान 6 वर्ष के लिए राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त(अधिकतम आयु 65वर्ष) किया जाता केन्द्रीय सतर्कता आयुक्त को संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष को हटाने की रीति से हटाया जा सकता है। सेवा निवृत्ति के पश्चात् वह केंद्रीय अथवा राज्य, किसी सरकार में काम करने का पात्र नहीं है।

1998 के अध्यादेश ने CVC को CBI और प्रवर्तन निदेशालय जैसी जाँच एजेन्सियों की तरह जाँच करने और अपने प्रमुखों को नियुक्त करने की सिफारिश करने के व्यापक अधिकार प्रदान किए हैं।

CVC केन्द्र सरकार में भ्रष्टाचार रोकने की प्रमुख एजेंसी है। यह केन्द्र सरकार को उन तमाम मामलों पर सलाह देती है, जिनका संबंध प्रशासन में ईमानदारी की सुरक्षा करना और इसे बनाये रखना है। अतः लोकसेवा आयोग की तरह इसकी भूमिका भी सलाहाकार की है। अपने कार्यों का निष्पादन करने के लिए इसे लोक सेवा आयोग के स्तर की ही स्वायत्ता तथा स्वतंत्रता प्राप्त है।

केन्द्रीय सतर्कता आयोग कार्मिक मंत्रालय के अधिकार क्षेत्र में आता है। अपनी गतिविधियों की वार्षिक रिपोर्ट यह मंत्रालय को देता है, जो तत्पश्चात संसद के दोनों सदनों में रखी जाती है।

आयोग के अधिकार क्षेत्र के अंतर्गत वे सारे मामले आते हैं, जो सरकार के कार्यकारी अधिकारों की सीमा में पड़ते हैं। इसके अधिकार क्षेत्र के अंतर्गत निम्नलिखित लोकसेवक आते हैं–

1. केन्द्र सरकार के सभी कर्मचारी।

2. सार्वजनिक प्रतिष्ठानों, निगमों तथा केन्द्र सरकार के अधीन काम करने वाले अन्य संस्थान।

3. दिल्ली महानगर परिषद् और नई दिल्ली नगर पालिका समिति के सभी कर्मचारी।

परन्तु वर्तमान में इसका अधिकार क्षेत्र केवल राजपत्रित अधिकारियों के समान स्तर के अधिकारियों तक सीमित है। यह केवल उच्चतर लोकसेवकों से संबंधित सतर्कता के मामलों पर ही सलाह देता है। इसको राजनीतिक भ्रष्टाचार के मामलों (अर्थात् सांसदों और मंत्रियों) में जाँच करने का अधिकार नहीं।

आयोग को भ्रष्टाचार और दुराचार के विरुद्ध शिकायतें सीधे पीड़ित नागरिकों से मिलती हैं। इनसे संबंधित सूचनाओं को वह (i) प्रेस रिपोर्टों, (ii) लेखा–परीक्षा रिपोर्टों, (iii) विभिन्न विभागों/संबद्ध प्रतिशठानों, (iv) सांसदों द्वारा लगाए गए आरोपों और (v)संसदीय समिति की रिपोर्टों से भी एकत्र कर सकता है।

केन्द्रीय सतर्कता आयोग के निम्नलिखित कार्य हैं–

(i) उस प्रत्येक लेन–देन की छानबीन करना जिसमें किसी लोकसेवक पर भ्रष्ट ढंग से अथवा किसी अनुचित उद्देश्य के लिए काम करने का संदेह या आरोप है।

(ii) लोक सेवक के विरुद्ध भ्रष्टाचार, दुराचार, अपराध, ईमानदारी के अभाव या अन्य प्रकार के अनाचार की शिकायतों की जाँच पड़ताल करना।

(iii) मंत्रालयों, विभागों, सार्वजनिक प्रतिष्ठानों, बैंकों इत्यादि में निरीक्षण करने और सतर्कता तथा भ्रष्टाचार विरोधी कार्य की सामान्य जाँच करने के उद्देश्य से एजेन्सियों से रिपोर्टें या विवरण लेना।

(iv) अनुशासनिक मामलों में अनुशासनिक अधिकारियों को निष्पक्ष और स्वतंत्र ढंग से सलाह देना।

(v) भ्रष्टाचार के क्षेत्र को कम करने और प्रशासन में ईमानदारी बनाए रखने की कार्य पद्धतियों तथा कार्यों की समीक्षा करना।

(vi) आगे की कार्यवाही के लिए शिकायतों को सीधे अपने नियंत्रण में लेना/इसके अंतर्गत निम्न आते हैं–

(क) संबंधित मंत्रालय/विभागों से इसकी जाँच करने को कह सकता है।

(ख) यह सीबीआई से इसकी जाँच करने को कह सकता है।

(ग) इसमें सीबीआई से एक नियमित मामला दर्ज करने और इसकी जाँच करने को कह सकता है। मंत्रालय और विभागों में नियुक्त मुख्य सतर्कता अधिकारी केंद्रीय सतर्कता आयोग और मंत्रालयों/विभागों के बीच एक कड़ी का काम करते हैं। इनसे संबंधित कार्यालयों, अधिनस्थ कार्यालयों तथा सार्वजनिक प्रतिष्ठानों में भी सतर्कता अधिकारी होते हैं।

केन्द्रीय सतर्कता आयोग की तर्ज पर 1964 में विभिन्न राज्यों ने भी राज्य सतर्कता आयोगों का गठन किया था।

कार्यप्रणाली–केन्द्रीय सतर्कता आयोग वर्तमान में कार्मिक मंत्रालय के अधीन कार्यरत हैं। यह देश का सर्वोच्च सतर्कता निकाय है। इसे सभी प्रकार के कार्यपालिकीय नियंत्रण से मुक्त रखा गया है। यह एक बहु सदस्यीय निकाय है। वर्ष 2004 में भारत सरकार ने (Public interest discloser and Protection of Information) पर एक प्रस्ताव ला कर (CVC) को यह अधिकार दिया गया कि वह किसी भी मामले को सार्वजनिक करने भ्रष्टाचार के आरोपों अथवा सरकारी कार्यालयों के दुरूपयोग संबंधी मामलों की शिकायतें लिखित रूप में स्वीकार कर सकता है।

यह विभिन्न विभागों अथवा सार्वजनिक उद्यमों के संबंध में शिकायकर्ताओं द्वारा भ्रष्टाचार और दुर्व्यवहार आदि से संबंधित शिकायतें स्वीकार करता है, परन्तु केवल केन्द्र सरकार से संबंधित मामलों की जाँच पड़ताल प्रथम दृष्टया अथवा अधिकार क्षेत्र के आधार पर स्वीकार करता है। यदि उसे ऐसा प्रतीत होता है कि प्रथम दृष्टया आरोप विद्यमान है, तो वह शिकायतों को संबंधित प्राधिकारियों तक प्रेषित कर देता है। इसके साथ ही साथ वह शिकायतों को (CBI) और (CVC) के अधिकारियों को भी विस्तृत जाँच पड़ताल के लिए प्रेषित कर देती है। इस प्रकार प्राथमिक जाँच पूरी होने के बाद प्रथम चरण की सलाह लेने के पश्चात् विभाग से सम्पर्क किया जाता है। यदि संबंधित विभाग कठोर दण्ड (Major Penlty) देने की पहल कर देता है, तो जाँच पड़ताल की प्रक्रिया पूरी होने के पश्चात् दूसरी चरण की सलाह के लिए आयोग से सम्पर्क किया जाता है। यह सलाह अन्तिम सलाह होती है।

CVC की अनुशंसाएँ सलाहकारी होती है। ऐसा कई बार कहा जाता है कि CVC केवल सलाहकारी निकाय होने के कारण बहुत प्रभावी नहीं होता, परन्तु अब तक भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। ऐसे अनेक मामले रहे हैं, जो यह प्रमाणित करते हैं कि CVC की अनुशंसाओं पर संबंधित अधिकारियों के विरुद्ध कठोर कार्यवाहियाँ की गई हैं। यद्यपि ऐसे भी मामले है, जो लम्बे समय से लम्बित है और सरकार ने कार्यवाही का निर्णय नहीं लिया।

भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने हेतु अधिक से अधिक जन–भागीदारी सुनिश्चित करने के उद्देश्य से CVC ने 25 अक्टूबर 2010 को एकToll free No. शुरू किया है। यह आयोग के कार्यक्रम {(Vig-Eye) VIGILANC-EYE)} का भाग है। इस परियोजना के माध्यम से आयोग सार्वजनिक मामलों पर जनता की निगरानी सुनिश्चित करने का प्रयास कर रहा है। इसके अन्तर्गत जो भी व्यक्ति आयोग को शिकायते भेजते हैं, उन्हें VIG-EVE कहा जाता है। इस परियोजना में सतर्कता शिकायत प्रबंधन प्रणाली Vigilance Complaint Mangment Systemशामिल की गई है जो Cell Phone एवं Web आधारित है। आम नागरिक इनके माध्यम से सीधे शिकायत कर सकता है।

VIG-EYE की विशेषताओं में शिकायतें दर्ज कराने की सरल प्रक्रिया, शिकायकर्ता की वास्तविक पहचान गुप्त रखना ,शिकायत प्रक्रिया का डिजिटिलीकरण, शिकायतों के बेहतर वर्गीकरण तथा शिकायतों की सुनवायी की पूरी जानकारी आदि शामिल है।

CVC एक स्वतंत्र निकाय है, जिसका उत्तरदायित्व भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाना है। इसकी स्वयं की जाँच एजेन्सी नहीं है। इसकी समस्त जाँच पड़ताल CBI द्वारा की जाती है। इससे जाँच पड़ताल की प्रक्रिया प्रभावित होने की संभावना बनी रहती है।

आयोग के अधिकारियों में वर्तमान परिपेक्ष्य में उपर्युक्त कौशल का अभाव पाया जाता है, इसलिए केन्द्र एवं राज्य सतर्कता अधिकारियों के क्षमता निर्माण के लिए प्रशिक्षण प्रकोष्ठ मजबूत करने की आवश्यकता है। इसके साथ ही साथ इसे ज्यादा से ज्यादा प्रभावी बनाने के लिए यह भी आवश्यक है कि जाँच–पड़ताल की मशीनरी, जाँच–पड़ताल में कार्यरत अभिकरणों एवं व्यक्तियों के कार्य क्षेत्र को विस्तृत किया जाए। अन्ततः यह भी आवश्यक है कि CVC की वित्तीय एवं प्रशासनिक शक्तियों को यथार्थ रूप में सतत् बनाये रखा जाए।

Most Trusted Learning Platform
KHAN SIR

सामाजिक जवाबदेही (Social Accountability)

यह संकल्पना हाल के दिनों में अत्यधिक प्रचलित हुई है। लोकतांत्रिक जबावदेही के एक रूप में सामजिक जवाबदेही के अन्तर्गत नागरिक भागीदारी के माध्यम से जवाबदेही सुनिश्चित की जाती है। पारम्परिक रूप से नागरिकों द्वारा सरकार अथवा प्रशासन को जनता के प्रति जवाबदेह ठहराने के लिए विरोध, प्रदर्शन, प्रचार अभियान, खोजी पत्रकारिता, जनहित याचिका आदि का सहारा लिया जाता रहा है।यद्यपि ये सभी तरीके आज भी प्रचलन में है।

हाल के दिनों में सामाजिक जवाबदेही के रूप में एक नई पीढ़ी की पद्धति का विकास हुआ, जिसके अन्तर्गत सहभागितापूर्ण आँकड़े एकत्रित करना, नागरिक एवं सभ्य समाज की राज्य के साथ भागीदारी सुनिश्चित करने के अवसर उपलब्ध करवाना आदि शामिल है। विश्व बैंक के अनुसार सामाजिक जवाबदेही नागरिकों एवं राज्यों के बीच प्रत्यक्ष जवाबदेही का सुनष्चितिकरण एवं क्रियान्वयन है।

सामाजिक जवाबदेही मतदान के माध्यम से जवाबदेही सुनिश्चित कराने से कहीं ज्यादा व्यापक है। इसके अन्तर्गत सभ्य समाज, मीडिया, सरकारी कर्मचारी तथा अन्य सामाजिक कार्यकर्ता शामिल होते हैं, जो सामूहिक रूप से किये जाने वाले प्रयासों को सवंर्द्धित करते हैं।

सामाजिक जवाबदेही नागरिकों की भागीदारी पर आधारित हैं। इसके अन्तर्गत सरकारी अधिकारियों तथा सेवा प्रदाताओं से नागरिक प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से भागीदारी करते हुए जवाबदेही की मांग करते हैं या फिर परिवर्तन के लिए सामूहिक कार्यवाहियों के साथ जन–अधिकारियों तथ जन–सेवाओं की आपूर्ति से संबंधित सूचनाओं तक पहुॅच सुनिश्चित करते हैं।

कार्यात्मक स्तर पर सामाजिक जवाबदेही नागरिको, जन समुदायों, स्वतंत्र मीडिया, सभ्य समाज संगठनों तथा अन्य स्वैच्छिक संगठनों द्वारा अपनायी गई प्रविधियाँ एवं कार्यवाहियाँ हैं, जिसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि सरकारी अधिकारियों द्वारा क्या किया जाना चाहिए और क्या नहीं? तथा उन गतिविधियाँ का अनुसरण करते हुए उनकी जवाबदेही भी सुनिश्चित करना है।

जवाबदेही सुनिश्चित करने के सभी पारम्परिक तरीके, आपूर्ति पक्ष (Supply Side) से संबंधित है, जबकि सामाजिक जवाबदेही मांग पक्ष (Demand Side) से संबंधित है। आपूर्ति पक्ष से संबंधित जवाबदेही के तरीके एक प्रकार से ऊपर से नीचे की ओर (Top to bottom) आरोपित की जाती है, जबकि सामाजिक

जवाबदेही नीचे से ऊपर (Bottom-Up) की ओर से संबंधित अवधारणा है। इसकी वकालत आपूर्ति पक्ष की प्रविधियों की सीमित सफलता के कारण की गई।

सामाजिक जवाबदेही सुनिश्चित करने की एक प्रमुख प्रविधि के रूप में सामाजिक अंकेक्षण (Social Audit) हाल के दिनों में अत्याधिक प्रचलित हुई है।

सामाजिक अंकेक्षण (Social Audit)

यह संगठनों के गैर वित्तीय उद्देश्यों एवं प्रभावों का आकलन करने में सहायक होती है। सामाजिक अंकेक्षण में संगठनों के प्रभावों का आकलन करने हेतु संगठन द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं का सुव्यवस्थित एवं नियमित अनुश्रवण करते हुए जनता को शामिल किया जाता है। इसमें भागीदारों (Stake-holders) का शामिल होना अनिवार्य है। इन भागीदारों/लाभार्थी कर्मचारी, स्वैच्छिक कार्यकर्ता, वित्त उपलब्ध कराने वाले अभिकरण ठेकेदार, आपूर्तिकर्ता तथा स्थानीय निवासी शामिल होते हैं।

सामाजिक अंकेक्षण संगठन द्वारा ही निर्धारित कर दिया जाता है। सामाजिक अंकेक्षण उस कार्यक्रम में भागीदार (लाभार्थी) व्यक्तियों तथा बाहरी व्यक्तियों द्वारा कार्यक्रम की वस्तुनिष्ठता एवं सत्यता का परीक्षण करते हैं, जिसके माध्यम से सामाजिक प्रभाव का आकलन किया जाता है। इस सन्दर्भ में NGO अत्यधिक सहायक हो सकते है। सामाजिक अंकेक्षण के तहत सतत् रूप में सूचनाओं का एकत्रण किया जाता है, जो वर्ष भर चलता रहता है। इस प्रकार इसका एक दस्तावेज तैयार हो जाता है।

सामाजिक अंकेक्षण द्वारा प्राप्त परिणामों को संगठन के रणनीतिक पुनरीक्षण तथा योजना प्रक्रिया में शामिल करते हुए कार्यक्रम के निष्पादन तथा उसके सामाजिक प्रभाव को और बेहतर किया जा सकता है। सामाजिक अंकेक्षण के लाभ–

1. गवर्नेंस बेहत्तर होगा
2. गरीबी में कमी।
3. समष्टि स्तर पर नागरिकों का सशक्तीकरण विशेष, रूप से गरीब वर्गों का।
4. भ्रष्टाचार में कमी।
5. सामाजिक पूँजी में वृद्धि।
6. सार्वजनिक क्षेत्रों के सुधारों एवं विकेन्द्रीयकरण में वृद्धि।

7. पारदर्शिता में वृद्धि।

<u>समाजिक अंकेक्षण में जोखिम (**Rick in Social audit**)</u>

1. नागरिक अपेक्षाओं में वृद्धि।

2. संपोषणीयता (Sustainlability) एवं संस्थानीयकरण का अभाव।

3. सेवाओं के बेहतर परिणाम प्राप्त न होना।

4. सर्वसमावेशिकता का अभाव। यह सम्भव है कि गैर सरकारी संगठनों में कुछ पेशवरों तथा राजनीतिज्ञों का एक छोटा समूह शामिल हो ना कि जन–समुदाय।

समाजिक अंकेक्षण को प्रभावी बनाने के सुझाव/कारक–

1. राजनीतिक संदर्भ एवं संस्कृति।

2. <u>सूचनाओं तक स्वतंत्र पहुँच</u>–इस संबंध में सूचना का अधिकार अधिनियम अत्यन्त प्रभावी भूमिका निभा सकता है।

3. मीडिया की भूमिका।

4. सभ्य समाज की भूमिका एवं क्षमता।

5. क्षमतावान राज्य।

6. राज्य–समाज सहसंबंध।

7. संस्थानीकरण।

निष्कर्ष–सामाजिक जवाबदेही/सामाजिक अंकेक्षण के लाभ, जोखिम तथा इसकी प्रभावी सफलता संबंधित, राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक परिपेक्ष्य पर निर्भर करती है।

KHAN GLOBAL STUDIES
Most Trusted Learning Platform
KHAN SIR

पारदर्शिता (Transparency)

सामान्य अर्थों में पारदर्शिता का तात्पर्य सूचनाओं का साझा करना एवं खुले रूप में कार्य करना है। सूचनाओं तक स्वतंत्र पहुँच पारदर्शिता को बढ़ाती है। इसलिए प्रशासन में पारदर्शिता सुनिश्चित किये जाने हेतु यह आवश्यक है कि नागरिकों की सूचनाओं तक पहुँच हो। यह भी आवश्यक है कि संबंधित सूचनाएँ समय रहते मिल जाएँ, प्रासंगिक हो, सटीक हो तथा आधी–अधूरी ना हो कर पूर्ण हो।

इस प्रकार की पारदर्शी प्रणाली प्रशासन में पारदर्शी व्यवहार को बढ़ाने तथा भ्रष्टाचार पर नियंत्रण रखने में सहायक होती है। वस्तुतः पारदर्शिता गुड गवर्नेंस की प्रमुख विशेषताओं में से एक है। दूसरे शब्दों में श्रेष्ठ अभिशासन के लिए पारदर्शी प्रशासन अनिवार्य है।

पारदर्शिता के क्षेत्र में की गई प्रमुख पहल–

1. सिटीजन चार्टर (नागरिक घोषणा–पत्र)।
2. ई–गवर्नेंस–एवं इस पर आधारित कार्यक्रम जैसे–
   (i) ई–चौपाल
   (ii) ई–भूमि–उदा. आन्ध्र प्रदेश।
   (iii) ई–आपूर्ति आदि
3. सूचना का अधिकार।
3. लोक सेवा अधिनियम।

<u>ई–गवर्नेन्स</u> (e-governance)

ई–गवर्नेंस का तात्पर्य सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के माध्यम से गवर्नेंस है। दूसरे शब्दों में सरकार के समस्त कार्य एवं कार्यवाहियाँ, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के माध्यम से किया जाना ही ई–गवर्नेंस है।

ई–सरकार एवं ई–अभिशासन प्रायः समानार्थी रूप में प्रयुक्त कर दिया जाता है, परन्तु दोनों में भिन्नता पायी जाती है। ई–सरकार सामान्यतः सरकार के संस्थाओं एवं अभिकरणों में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी से संबंधित हैं, जबकि ई–गवर्नेंस इन संस्थओं एवं अभिकरणों द्वारा उपलब्ध कराई जाने वाली सेवाओं से सम्बन्धित है।

KHAN GLOBAL STUDIES
Most Trusted Learning Platform
KHAN SIR

ई–गवर्नेंस से सुशासन की प्राप्ति में सहायता मिलती है। जैसा कि विश्व बैंक ने वर्ष 1992 में अपने अभिशासन एवं विकास नामक दस्तावेज में सुशासन की प्राप्ति के लिए जवाबदेही, पारदर्शिता, अनुक्रियाशीलता आदि पर विशेष बल दिया था। इस अवधारणा के उपरान्त विकासशील देशों में भी इस ओर प्रयास किये जाने लगे।

यह कहा जाता है कि ई–गवर्नेंस से गवर्नेन्स SMARTहो जायेगा साथ ही साथ सरकार भी SMARTहो जायेगी। SMART गवर्नेन्स का तात्पर्य (Simple) सरल, Moral (नैतिक), Accountabale (जवाबदेही), Responsible (अनुक्रियाशील), Transparent (पारदर्शी)। भारत सरकार ने SMARTगवर्नेन्स को प्राप्त करने के लिए अनेक प्रयास किये हैं। यद्यपि अभी भी बहुत कुछ किया जाना शेष है। कई राज्यों में कुछ विशेष सेवाओं को पूरी तरह से सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के माध्यम से उपलब्ध कराया जा रहा है। उदाहरणस्वरूप–आन्ध्र प्रदेश में ई–भूमि अन्य उदाहरण–बिहार में समेकित बाल विकास सेवाएँ, ई–चौपाल आदि।

जवाबदेही, पारदर्शिता, अनुक्रियाशीलता आदि की प्राप्ति के लिए यह आवश्यक है कि आम जनता जागरूक हो तथा उसकी भागीदारी सुनिश्चित हो। ठीक इसी प्रकार ई–गवर्नेन्स की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि देश का कोई भी व्यक्ति Digitaly Divided ना हो। अतः सरकार पर दोहरा दायित्व आता है, जहाँ एक ओर उसे ई–गवर्नेन्स पर दोहरा दायित्व आता है। जहाँ एक ओर उसे ई–गवर्नेन्स उपलब्ध करवाना है, वहीं दूसरी ओर कम्प्यूटर शिक्षा तथा देश के कोने–कोने से इण्टरनेट सेवा उपलब्ध करवाना है। ई–गवर्नेंस द्वारा उपलब्ध करवायी जाने वाली सेवाओं को सरल रूप में उपलब्ध करवाया जाना चाहिए। ऐसे कई उदाहरण हैं जहाँ आन लाइन सेवा प्राप्त करना, इण्टरनेट के बेहतर प्रयोग जानने वाले लोगों के लिए भी बहुत कठिन प्रतीत होता है।

KHAN GLOBAL STUDIES Most Trusted Learning Platform KHAN SIR

ई–गवर्नेंस–

ई–गवर्नेंस सामान्य अर्थों में इलेक्ट्रानिक गवर्नेंस है। ई–गवर्नेंस सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का प्रयोग करते हुए गवर्नेंस करना है।

ई–गवर्नेंस के मॉडल–विकासशील देशों में ई–गवर्नेंस के निम्नलिखित मॉडल हैं–

1. प्रसारण अथवा व्यापक विसरण मॉडल।

2. क्रांतिक प्रवाह मॉडल।

3. तुलनात्मक विश्लेशण मॉडल।

4. समूहन अथवा लॉबी बनाना मॉडल।

5. अन्तक्रियात्मक सेवा मॉडल।

1. प्रसारण अथवा व्यापक मॉडल (Bradcosting or Information dissimination Model) यह मॉडल बेहतर अभिशासन हेतु प्रासंगिक सूचनाओं पर आधारित है। इस मॉडल के अन्तर्गत जिन क्षेत्र में (Public domain) में पहले से उपलब्ध सूचनाओं को सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के माध्यम से व्यापक जन क्षेत्र में उपलब्ध करवायी जाती है।

   यह मॉडल इस तर्क पर आधारित है कि यदि जनता को अधिक से अधिक सूचनाएँ प्राप्त होती तो वे अभिशासन की प्रविधियों एवं पद्धतियों को बेहतर ढंग से समझ सकेंगे तथा चयन करने एवं अधिकारों के प्रयोग एवं उपलब्धता तथा उत्तरदायित्वों के निर्वहन में अधिक सशक्त होंगे।

   महत्व–यह मॉडल जनता को सूचनाएँ उपलब्ध कराने हेतु एक वैकल्पिक चैनल (मार्ग) उपलब्ध करवाता है। इसके साथ–साथ वाह्य श्रोतों से स्थानीय डोमेन में उपलब्ध सूचनाओं की पुष्टि करता है।

प्रयुक्तिकरण(**Application**)–यह मॉडल निम्नलिखित स्थितियों में प्रयुक्त किया जाता है।

1. सरकारी विधियों एवं विधानों को ऑनलाइन उपलब्ध करवाना।
2. स्थानीय अधिकारियों के नाम एवं उनके सम्पर्क करने का पता, ई–मेल, फैक्स नं0 आदि को ऑन लाइन उपलब्ध करवाना।
3. सरकारी योजनाओं, बजट व्यय तथा निष्पादन को ऑन लाइन उपलब्ध करवाना।कुछ ऐसे प्रमुख न्यायिक निर्णयों को ऑन लाइन उपलब्ध करवाना जो आम नागरिकों हेतु मूल्यवान हो तथा भविष्य में न्यायिक कार्यवाहियों में प्रयुक्त किए जा सके।

   यह मॉडल डिजीटल गवर्नेन्स के मॉडलों के अधिक विकसित स्वरूपों में प्रथम प्रयास है। यह समाज के सभी वर्गों तक सूचनाएँ पहुँचाने का एक महत्वपूर्ण मॉडल है। जो कि बेहतर अभिशासन में अत्यन्त सहायक है। इसे भारत में केन्द्र एवं राज्य तथा स्थानीय स्तरों तक प्रत्येक विभाग एवं अभिकरणों में प्रयुक्त किया जाना चाहिए। जिससे की सरकारी प्रक्रियाओं

की जवाबदेही एवं पारदर्शिता सुनिश्चित की जा सके। इसके अतिरिक्त अभिशासन में जन–भागीदारी का वातावरण तैयार किया जा सके।

सीमाएँ (**Limitation**)–

1. यह इन परिस्थितियों में प्रभावकारी नहीं रह पाता जहाँ सूचनाओं का स्वतंत्र प्रवाह एवं वस्तुनिष्ठता को प्रोत्साहित नहीं किया जाता।
2. सूचनाओं की अन्तर्वस्तु पर कठोर नियंत्रण तथा उन पर सेंसर लगाने जैसी स्थितियों में भी यह मॉडल सफल नहीं होता।

इस मॉडल पर आधारित संगठन अथवा परियोजना–भारत में डायरेक्ट्री ऑफ ऑफिसियल बेवसाइट ऑफ गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया। भारत सरकार की सरकारी बेवासाइट/नेशनल इन्फोर्मेटिक्स सेन्टर है। यह बेवसाइट सरकारी मंत्रालयों उनकी योजनाओं तथा परियोजनाओं से संबंधित सुचनाएँ उपलब्ध करवाती है तथा कानूनों व विधानों को भी ऑन लाइन उपलब्ध करवाया जाता है।

2. क्रांतिक प्रवाह मॉडल
(Critical Flow Modal)

यह मॉडल अतिमहत्वपूर्ण सूचनाओं को लक्षित समूह अथवा व्यापक पब्लिक डोमेन तक पहुँचाने पर आधारित है। इस मॉडल के लिए यह आवश्यक है कि सूचनाओं के एक विशेष समुच्चय के महत्व का अनुमान लगाकर उसका रणनीतिक प्रयोग किया जाए।

महत्व–इस मॉडल का महत्व इस तथ्य में निहित है कि यह समय एवं दूरी के तत्व को लगभग समाप्त कर देता है। यह अभिषासन में शोषण के मामलों की संभावना को न्यून अथवा समाप्त कर देता है।

प्रयुक्तिकरण–

1. किसी विशेष सरकारी मंत्रालय अथवा उसके कर्मचारी आदि के भ्रष्टाचार के मामलों से संबंधित सूचना उपलब्ध करवाना।
2. सरकार द्वारा शीर्घ अध्यनों, जाँच रिपोर्टो तथा निष्पादन मूल्यांकन रिपोर्टो को लक्षित लोगों तक प्रभावी रूप से पहुँचाना।
3. सरकार के विरुद्ध मानवाधिकार उल्लंघन तथा अपराधिक अभियोग आदि के रिकार्डो को प्रभावी पक्षों तक पहुँचाना।
4. स्थानीय जन–समुदाय तक पर्यावरण से संबंधित सूचनाएँ उपलबध करवाना।

KHAN GLOBAL STUDIES Most Trusted Learning Platform KHAN SIR

यह मॉडल अपनी सूचनाओं की अन्तर्वस्तु तथा प्रयोक्ताओं की दृष्टि से अत्यन्त महत्पूर्ण एवं प्रत्यक्ष है। यह अभिशासन तथा निर्णयन (निर्णय, निर्माण) प्रविधियों के कमजोर पक्षों को उजागर करता है। राज्य की असफलता तथा कुशासन के मामलों को जनता तक पहुँचा कर विषेश कार्यवाही के लिए प्रेरित करता है। इसके कारण जनता में व्याप्त असन्तोश तेजी से बढ़ता है, जिसके फलस्वरूप संबंधित सरकारी एजेन्सी निर्णय प्रक्रिया में जन–समुदाय के हितों तथा विचारों पर ध्यान देने के लिए विवष होती है। इस मॉडल का सबसे बड़ा लाभ यह है कि यह सरकारी कार्यवाहियों एवं नीतियों पर निगरानी हेतु सभ्य समाज को सशक्त बनाता है।

सीमाएँ–(**Limitation**)–

1. सरकार द्वारा सूचनाओं का साझा करने के लिए तैयार न होना।
2. सरकारी कार्यवाहियों एवं प्रविधियाँ महत्वपूर्ण सूचनाओं पर जनता के बीच वाद–विवाद को प्रेरित न करना तथा उन पर सेंसर लगाना।
3. मॉडल का उदाहरण–भारत में CVC के द्वारा चलाया जा रहा VIG-EYE कार्यक्रम ।

3. तुलनात्मक विश्लेषण मॉडल–यह मॉडल प्रभावी सर्वाधिक प्रभावी मॉडल के रूप में तेजी से प्रचलित हो रहा है। इसके अन्तर्गत पब्लिक/प्राइवेट डोमेन उपलब्ध सूचनाओं को एकत्रित कर वाद–विवाद तथा रणनीतिक निर्णयों के पहले सूचनाओं का तुलनात्मक विश्लेषण किया जाता है।

इस तुलना को समय के आधार पर किया जाता है। जिससे की भूत एवं वर्तमान परिस्थितियों का सही आंकलन किया जा सके।

इसका सर्वाधिक महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि बिना किसी भौगोलिक और पद सोपानिक बाधाओं के सूचनाओं को कहीं भी पहुँचाया जा सकता है।

प्रयुक्तिकरण–

1. सरकार की विभिन्न नीतियों तथा कार्यवाहियों के आधार पर वर्तमान नीतियों की प्रभावकारिता के सुनिश्चितकरण में।
2. न्यायिक/वैधानिक निर्णयों के द्वारा भविष्य के निर्णयों को प्रभावित करने में।
3. पेटेण्ट संबंधी मतभेदों तथा सार्वजनिक स्वामित्व अधिकारों जैसे मामलों को सुलझाने में।
4. सभी स्तरों पर निर्णयन संबंधी सूचनाओं की वृद्धि।
5. किसी सरकारी विभाग/मंत्रालय के निष्पादन अभिलेखों को मूल्यांकन।

KHAN GLOBAL STUDIES Most Trusted Learning Platform KHAN SIR

सीमाएँ–

1. यह मॉडल तुलनात्मक सूचनाओं की उपलब्धता तथा प्रयोक्ताओं की विश्लेषण क्षमता पर निर्भर करता है।

इस प्रकार इस मॉडल के लिए सूचनाओं का विश्लेषण एवं विश्लेषणकर्ताओं का सर्वाधिक महत्व है।

2. यह मॉडल एक मजबूत सभ्य समाज की अनुपस्थिति तथा क्षणिक जन–स्मृति में अप्रभावी हो जाता है।

मॉडल का उदाहरण–भारत में आपदाओं से तुलनात्मक सीख, जैसे भुज एवं कच्छ में आये भूकम्प से तुलना करते हुए आपदा प्रबंधन की रणनीति तैयार की गई।

3. समूहन अथवा लॉबी बनाना मॉडल **(Mobilisation/Lobbying Model)-**

यह मॉडल विकासशील क्षेत्रों में सभ्य समाज संगठनों को सहायता देने तथा अन्तर्राष्ट्रीय निर्माण प्रक्रिया को सुविधाजनक बनाने हेतु विकसित किया गया है। यह सूचनाओं के सुनियोजित, निर्देशित एवं रणनीतिक प्रवाह पर आधारित है। इसमें वास्तविकता के बजाय आभासी वातावरण तैयार करके सूचनाओं को एकत्र करते हुए निर्णयन प्रक्रिया को बेहतर बनाया जाता है। इस मॉडल में भौगोलिक संस्थागत तथा नौकशाही की सीमाओं को प्रभावी तरीके से दूर किया जा सकता है।

प्रयुक्तिकरण–

1. वैश्विक मुद्दों पर वाद–विवाद को बढ़ावा देने अथवा वाद–विवाद तथा चर्चा के लिए सम्मेलनों की थीम का निर्धारण करने तथा संधियाँ करने आदि में।

2. निर्णयन को प्रभावित करने हेतु दबाव समूह का निर्माण करने में।

3. निर्णयन प्रक्रिया में वंचित वर्गों की बात/मांग निर्णयकर्ताओं तक पहुँचाने में।

4. निर्णयन प्रक्रिया में जन–भागीदारी सुनिश्चित करने में।

5. निर्णयन के संबंध में सूचनाओं के अभाव की स्थिति में किसी विशेष थीम पर वैश्विक विशेषज्ञता उपलब्ध करवाने में। विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यू. टी.ओ.) के सिएटल दौरे की वार्ता के बाद यह मॉडल तेजी से विकसित हुआ है। भारत में पंचायत स्तर पर स्थानीय आजीविका से संबंधित नीतिगत मुद्दों पर केस स्टडी की भारतीय पेशेवरों द्वारा तैयार सूची उपलब्ध है।

4. अन्तक्रियात्मक सेवा मॉडल–**(Interative Service Model)**

इसे मुख्य रूप से सरकार से नागरिक (जी2सी) तथा नागरिक से सरकार मॉडल के रूप में जाना जाता है, क्योंकि यह सरकार एवं नागरिकों तथा नागरिकों एवं सरकार के बीच अन्तः क्रिया पर आधारित है। यद्यपि वर्तमान समय में यह मॉडल विकसित होते हुए जी2बी, बी2जी. को भी शामिल कर चुका है। यह मॉडल ई–गवर्नेन्स के पूर्व के मॉडलों का संघटित रूप है। यह गवर्नेन्स की प्रक्रिया में व्यक्तियों की प्रत्यक्ष भागीदारी सुंश्चित करता है। यह विभिन्न कार्यो जैसे–ई–बैलेट (EVM) कर रिर्टन भरने, सरकारी सेवाओं को उलब्ध करवाने, चुनाव पूर्व सर्वेक्षण, सार्वजनिक मुद्दों पर जनमत सर्वेक्षण, शिकायत निवारण आदि में सरकार एवं नागरिक तथा नागरिक एवं सरकार के मध्य अन्तःक्रियात्मक चैनल उपलब्ध करवाता है।

प्रयुक्तिकरण–

1. नीति–निर्माताओं के साथ अन्तःक्रियात्मक संप्रेशण माध्यम स्थापित करने में जैसे–वीडियो कांफ्रेसिंग
2. सरकारी चुनावों में ई–मतपत्र का प्रयोग।
3. नीति अथवा विधिनिर्माण के पूर्व जन के मध्य वाद–विवाद एवं जनमत तैयार करना।
4. शिकायतें दर्ज करवाने, प्रतिपुष्टि (Feed Back) उपलब्ध करवाने आदि में।
5. राजस्व एकत्रीकरण, कर अदायगी आदि में।

जैसे–भारत में मध्य प्रदेश सरकार ने धार जिले के ग्रामीण साइबर कैफ को जोड़ने के लिए ज्ञानदूत नामक इंटरनेट सुविधा शुरू की है। यह वेबसाइट अभिशासन से संबंधित सरकार तथा नागरिकों व नागरिकों तथा सरकार के बीच अन्तःक्रियात्मक सूचनाएँ उपलब्ध करवाती है। जैसे–भू मानचित्र की प्रतियाँ, ऑन लाइन रजिस्ट्रेशन, जन–शिकायत निवारण इत्यादि। मध्य प्रदेश सरकार का यह कार्यक्रम Tele Centerआधारित ई–गवर्नेन्स मॉडल निर्माण की तरफ उन्मुख है।

G2G (Government to Government)

N-S(National Government to State Goverment)
S-N (State Government to National Govt.)
S-L (State Govt.toLocal Govt.)
L-S(Local Govt to State Govt.)
N-L (National Govt to Local Govt)
L-N(Local Govt. to National Govt.)

ई.गवर्नेन्स–प्रत्युक्तिकरण, सफलताएँ सीमाएँ एवं संभावनाएँ–

ई–गवर्नेन्स का प्रयुक्तिकरण–(**Application**)

सामान्यतः ई–गवर्नेन्स सरकार एवं नागरिकों के मध्य मधुर अन्तःक्रिया(Smooth Interaction) है। ई–गवर्नेन्स पूर्ण रूप से Mannul Governanceको हस्तांतरित नहीं कर सकता। फिर भी यदि निम्नलिखित क्षेत्रों में इसे प्रयुक्त किया जाये तो यह मानव जीवन के दैनिक आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त होगा।

1. शहरी सेवाएँ–शहरों में सेवाओं की आपूर्ति के लिए यदि एक एकीकृत ऑनलाइन सूचना एवं अनुश्रवण प्रणाली विकसित की जाए तो शहरी नागरिकों के लिए अत्यन्त सुविधाजनक वातावरण विकसित होगा। शहरी नागरिक सभी प्रकार की सेवाएँ केबिल, इलेक्ट्रानिक चैनल के माध्यम से जमा कर सकेंगे। जिससे समय, श्रम एवं धन सभी की बचत होगी और नागरिकों को जबावदेह एवं पारदर्शी प्रशासन मिलेगा।
2. करों का भुगतान–ई–गवर्नेन्स के माध्यम से करों के भुगतान प्रणाली की व्यवस्था से सरकारी अधिकारियों से करदाताओं को व्यक्तिगत रूप से मिलने की आवश्यकता में कमी आयेगी।
3. शिकायतें दर्ज कराना–नागरिकों के लिए पुलिस थानों में एफ.आई.आर. दर्ज कराना अत्यन्त दुरुह कार्य है। यदि इसकी व्यवस्था ऑनलाइन हो जाती है तो जनता आसानी से एफआईआर दर्ज कर सकेंगी और उस पर कार्यवाही सुनिश्चित हो सकेंगी।
4. विकासात्मक परियोजनाएँ–राष्ट्रीय, राज्य, जिला एवं स्थानीय सभी स्तरों पर विकास परियोजनाओं के लिए नियोजन तथा क्रियान्वयन के संबंध में ई–गवर्नेन्स आधारित मॉडल की प्रयुक्ति से न्यूनतम लागत एवं समय में महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ सुनिश्चित की जा सकती है। इस प्रकार बेहतर उत्पादन, उत्पादकता सुनिश्चित की जा सकती है, तथा बाजार तक पहुँच के द्वारा ग्रामीण जनता को अत्यधिक लाभ हो सकता है।
5. कार्मिकों की नियुक्ति एवं स्थानान्तरण–सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के प्रयोग से कर्मिकों की नियुक्ति एवं स्थानान्तरण को ऑनलाइन किये जाने से समय तथा स्वविवेकाधीन शक्तियों के प्रयोग अथवा निर्णय में कमी आयेगी। इस प्रकार किसी एक कर्मचारी के पक्ष में कोई भी निर्णय लेना मुश्किल होगा, क्योंकि नियुक्ति एवं स्थानान्तरण के संबंध में सभी जानकारियाँ एवं दिशा–निर्देश ऑनलाईन होंगे। इस प्रकार इस प्रणाली में उन आवेदनों की पहचान स्वतः ही हो जायेगी जो योग्य होंगे।
6. नागरिकों एवं सरकार के बीच अन्तःक्रिया बढ़ाना एवं बेहतर करना–नागरिक एवं सरकार के बीच अन्तःक्रिया स्थापित करने एवं बेहतर बनाने के लिए वर्तमान वातावरण में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का महत्व सर्वाधिक है।

इसके अतिरिक्त आधारभूत संरचनाओं, अपेक्षित औद्योगिक विकास तथा आर्थिक प्रगति के लिए ई–गवर्नेन्स एक पूर्व आवश्यकता है। इसके माध्यम से नागरिकों को सेवाओं की आपूर्ति में प्रशासन अनुक्रियाशील एवं पारदर्शी बनता है और परिणामतः लोगों का सशक्तिकरण होता है। नागरिकों एवं सरकार के बीच अन्तःक्रिया के अनेक क्षेत्र हैं, जिनमें से प्रमुख निम्नलिखित है–

(i) पासपोर्ट, ड्राइविंग लाइसेन्स, रॉशन कार्ड, पैन कार्ड, मतदाता पहचान पत्र आदि को एक ही इलेक्ट्रानिक स्मार्ट कार्ड में एकत्रित किया जा सकता है और इस प्रकार के कार्ड को नागरिक कॉर्ड के रूप में भी प्रयुक्त किया जा सकता है।

(ii) वाहनों का रजिस्ट्रेशन।

(iii) स्मार्ट कॉर्ड के माध्यम से यातायात नियमों के उल्लंघन का अनुश्रवण।

(iv) सार्वजनिक वितरण प्रणाली।

(v) आव्रजन सूचना एवं अनुश्रवण।

(vi) सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रबंधन।

(vii) जल एवं विद्युत आपूर्ति।

(viii) सम्पत्ति कर।

(ix) प्राथमिक शिक्षा।

ई–गवर्नेन्स की सफलता–ई–गवर्नेन्स के लिए कम्प्यूटर, टेली कम्युनिकेशन, प्रसारण संबंधी उत्पाद सभी को एकीकृत करने की आवश्यकता होती है। वर्तमान परिवेश में इन तीनों ने अत्यन्त लोकप्रियता हासिल की हैं, साथ ही साथ ई–गवर्नेन्स के क्षेत्र में सरकार द्वारा विभिन्न सेवाओं आदि को ऑनलाइन करने से भी जनता को अत्यन्त लाभ होना शुरू हुआ है। सेवाओं में एकल खिड़की व्यवस्था के द्वारा विभिन्न सेवाओं को एक ही स्थान इसे प्राप्त किया जा सकता है तथा कठोर पद सोपानिक संरचना समतलीय हो जाती है। इसके माध्यम से कार्य संचालन में तेजी आती है। समय की बचत होती है तथा टीम निष्पादन में अविश्वसनीय वृद्धि हो जाती है।

कम्प्यूटर क्रांति के बाद सम्पूर्ण विश्व में मानव जीवन पर अत्यन्त गहरा प्रभाव पड़ा है। यद्यपि प्रारम्भ में इनका प्रयोग आँकड़ों आदि से ज्यादा संबंधित था, परन्तु वर्तमान में टेली–कम्प्यूनिकेशन, ई–मेल, ईमेज भेजना एवं प्रोसेस करना, सोशल नेटवर्किंग आदि नये–नये क्षेत्र उभरे हैं। इसलिए इस नवीन युग

को एकीकृत सेवाएँ डिजिटल नेटवर्क (Integrated Services Digital Network-ISDN) कहा जाता है। इस प्रकार के विकास से एक नये युग की शुरुआत हुई है, जिसे निम्नलिखित के रूप में व्यक्त किया जा सकता है।

1. इण्टरनेट एवं Webने उपभोक्ताओं के लिए किसी भी समय और कही भी युग की शुरुआत की है। इसके माध्यम से उपभोक्ता दुनिया के किसी भी कोने में अपनी सुविधा के अनुसार Web आधारित कार्य कर सकते हैं तथा सेवाएँ प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार समय एवं दूरी की सीमाओं को समाप्त कर चुका है।

2. अत्यधिक शक्तिशाली कम्प्यूटर नेटवर्क विभिन्न संसाधन विहीन देशों को कम्प्यूटर के क्षेत्र में सशक्त बनाने की क्षमता रखती है। इसके अतिरिक्त उनके संसाधनों में वृद्धि भी होगी।

ई–गवर्नेन्स के उदाहरण, जिन्होंने कार्यकुशलता एवं मितव्ययता में अभूतपूर्व वृद्धि की है–

1. भारतीय रेल द्वारा ऑनलाइन टिकट–आरक्षण की व्यवस्था हाल ही में भारतीय रेल द्वारा मैसेज के माध्यम से टिकट आरक्षित कराने की व्यवस्था षुरू की है। रेलवे द्वारा इस व्यवस्था के सफलतापूर्वक चलाये जाने से होने वाले लाभ में सूचना तथा प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा एवं अध्ययन कराया गया, जिससे यह स्पष्ट हुआ कि यात्रियों का बहुत अधिक समय बचता है। साथ ही साथ टिकट बुकिंग करने के समय में भारी बचत होती है।
2. गुजरात सरकार द्वारा राज्य परिवहन विभाग में शुरू किये गये कम्प्यूटरीकृत चेक पोस्टों से भ्रष्टाचार लगभग समाप्त हो गया है। साथ ही साथ राजस्व में भी भारी वृद्धि हुई है। राजस्व (1998–99) में 60 करोड़ से बढ़कर 2000–01 में 250 करोड़ पहुँच गई, जबकि इस परियोजना में केवल 18 करोड़ रुपया खर्च हुए।

3.VIG-EYE इत्यादि।

भारत सरकार द्वारा सूचना प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देने के संबंध में किए गए उपाय–

(i) सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम 2000, इलेक्ट्रोनिक्स गवर्नेन्स हेतु प्रावधान–यह अधिनियम इलेक्ट्रोनिक्स माध्यम से आँकड़ों के आदान–प्रदान तथा इलेक्ट्रानिक्स संचार के अन्य संसाधनों को विधिक मान्यता प्रदान करता है। विशेष रूप से इलेक्ट्रानिक वाणिज्य तथा सूचनाओं का एकत्रण जिसके माध्यम से सरकारी अभिकरणों में फाइल भेजना सुविधाजनक होता है। इस अधिनियम में ई–गवर्नेन्स के संबंध में निम्नलिखित प्रावधान किए गए हैं।

(i) इलेक्ट्रानिक अभिलेखों की विधिक मान्यता–इसके अन्तर्गत यदि कोई सूचना/सामग्री इलेक्ट्रानिक्स रूप में भेजी/उपलब्ध करायी गई हो तथा प्रयुक्त किए जाने के लिए लोगों को उपलब्ध हो, तब उसे विधिक मान्यता प्राप्त होगी।

(ii) डिजिटल हस्ताक्षर की विधिक मान्यता–यदि व्यक्ति द्वारा किया गया डिजिटल हस्ताक्षर सरकार द्वारा निर्धारित प्रारूप में हो तो उसकी विधि मान्यता होगी।

(iii) सरकार एवं इसके अभिकरणों में इलेक्ट्रानिक्स का प्रयोग इसके अभिकरणों, अभिलेखों तथा डिजिटल हस्ताक्षर का प्रयोग–निम्न क्षेत्रों में किया जा सकेगा।

(i) किसी फॉर्म, आवेदन पत्र अथवा किसी कार्यालय, प्राधिकरण, निकाय/अभिकरण में आवेदन पत्र आदि भरना।

(ii) लाइसेन्स परमिट आदि जारी करना।

(iii) धन/राजस्व की प्राप्ति या किए जाने वाले योगदान।

इस संबंध में सरकारें विधि बनाकर यह निर्धारित कर सकती है कि किस प्रारूप के तहत इलेक्ट्रानिक अभिलेख रखे जायेंगे सृजित किए जायेंगे अथवा जारी किए जायेंगे। साथ ही साथ आवेदन के लिए षुल्क आदि के संबंध में भी सरकारें प्रारूप का निर्धारण कर सकेगी।

(iv) इलेक्ट्रानिक अभिलेखों का संग्रहण अथवा संरक्षित करना–किसी भी दस्तावेज, अभिलेख अथवा सूचना को विधि के आधार पर किसी भी समय तक संरक्षित रखा जा सकता है। यदि उन्हें इस प्रकार से इलेक्ट्रानिक प्रारूप में रखा जाए।

() वह सूचना लोगों की प्रयुक्ति के लिए उपलब्ध हो।

(b) अपने मूल रूप में संरक्षित की गई हो, जिसे की उसी रूप में भेजा/प्राप्त किया जा सके।

(c) ऐसे विवरण जिससे की उस अभिलेख के उद्भव, गन्तव्य, दिन एवं समय आदि (प्राप्त करने एवं भेजने का सुविधाजनक) हों।

उपर्युक्त षर्ते उन सूचनाओं पर नहीं लागू होती, जो केवल इलेक्ट्रानिक अभिलेखों को भेजने अथवा प्राप्त करने के उद्देश्य से भेजी गई हो।

(v) नियमों–विनियमों–आदि को राजपत्र (गजट) में प्रकाशित किया जाना–यदि किसी सामग्री को प्रिंट तथा इलेक्ट्रानिक दोनों रूपों में प्रकाशित किया गया हो, तो प्रकाशन की वही तिथि मान्य होगी जो सबसे पहले प्रकाशित की गई।

नोट–इलेक्ट्रानिक्स अभिलेखों, हस्ताक्षरों, अभिलेखों को संरक्षित करने तथा इलेक्ट्रानिक प्रारूप में प्रकाशित करने के संबंध में ऐसा करने हेतु किसी को मजबूर नहीं किया जा सकता। दूसरे षब्दों में ऐसा कोई अधिकार नहीं दिया गया है।

(v)डिजिटल हस्ताक्षर के संबंध में केन्द्र सरकार द्वारा विधि बनाया जा सकना–केन्द्र सरकार ने विधि बनाकर डिजिटल हस्ताक्षर के संबंध में निम्नलिखित प्रावधान किए–

(a) डिजिटल हस्ताक्षर के प्रकार।

(b) डिजिटल हस्ताक्षर किये जाने का तरीका एवं प्रारूप।

(c) डिजिटल हस्ताक्षर करने वाले व्यक्ति की पहचान हेतु प्रक्रिया/तरीका।

(d) इलेक्ट्रनिक्स लेख/भुगतान की सक्रियता, सुरक्षा एवं गोपनीयता को सुनिश्चित करने हेतु नियंत्रण प्रक्रियाएँ।

(e) डिजिटल हस्ताक्षर को विधिक मान्यता प्रदान हेतु कोई अन्य सामग्री।

निष्कर्ष–सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम से सरकारी काम काज में कार्यकुशलता, जवाबदेही एवं पारदर्शी में वृद्धि हुई है। कागजी कार्य एवं फाइलिंग व्यवस्था के स्थान पर इलेक्ट्रानिक आवेदन के माध्यम से लालफीताशाही पर अंकुश लगा है। वस्तुतः ई–गवर्नेन्स को सुविधाजनक बनाने वाला यह अधिनियम प्रशासन से भ्रश्टाचार दूर करने में सक्षम है।

<u>ई–गर्वेन्स पर न्यूनतम एजेण्डा</u>

विभिन्न मंत्रालयों एवं विभागों में ई–गवर्नेन्स पर न्यूनतम एजेण्डे के क्रियान्वयन की प्रगति का अनुश्रवण, प्रशासनिक सुधार विभाग करता है। न्यूनतम एजेण्डा न्यूनतम मूलभूत उद्देश्य आधारभूत संरचना को सुनिश्चित करने के साथ–साथ G2G एवं G2C की अन्तःक्रिया को भी सुनिश्चित करना है। न्यूनतम एजेण्डा में निम्नलिखित बिन्दु शामिल है।

(i) पर्सनल कम्प्यूटर की उपलब्धता।

(ii) LAN (Local Area Network स्थापित करना।

(iii) सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में प्रशिक्षण एवं क्षमता निर्माण।

KHAN GLOBAL STUDIES Most Trusted Learning Platform KHAN SIR

(iv) IT के प्रयोग से संबंधित शिकायतों का निवारण।

(v) वेबसाइट बनाना तथा वेबसाइट पर आवेदनों को उपलब्ध करवाना।

(vi) ऑनलाइन फॉर्म भरने की सुविधा।

(vii) पब्लिक डोमेन में नियमों, अधिनियमों सहित अन्य सूचनाएँ प्रकाशित करना।

किसी विभाग/मंत्रालय का संयुक्त सचिव स्तर के अधिकारी के सूचना प्रौद्योगिकी अधिकारी बनया जाता है। न्यूनतम एजेण्डा पर प्रकाशित रिपोर्ट से स्पश्ट हुआ है कि लगभग सभी मंत्रालयों एवं विभागों ने अपनी वेबसाइट बना ली है एवं उनके पे–रोल एवं लेखांकन इलेक्ट्रानिक किए जा चुके हैं। लगभग 90 प्रतिशत विभागों में कम्प्यूटर उपलब्ध करवाया जा चुका है तथा LAN स्थापित किया जा चुका है।

प्रशासनिक सुधार एवं जन–शिकायत (Department of A.R. & P. G.) विभाग ने ई–गवर्नेन्स पर अनेक राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किए हैं। इसके सम्मेलनों में 2005 में उड़ीसा में किया गया 8 वाँ सम्मेलन निम्नलिखित बातों पर विशेश बल देता है।

(i) सरकर में क्षमता–निर्माण हेतु ई–लर्निंग का विकास एवं प्रबंधन समस्याओं के निदान के लिए सहायता डेस्क का प्रबंधन एवं संचालन।

(ii) नागरिक/ग्राहकों की संतुश्टि (ई–गवर्नेन्स)।

(iii) कार्यालयों को स्वाचालनीकरण।

SMART गवर्नेन्स हेतु राष्ट्रीय संस्थान की स्थापना–सूचना प्रौद्योगिकी एवं सॉफ्टवेयर पर राष्ट्रीय टास्क फोर्स द्वारा की गई 108 अनुशंसाओं में से एक महत्वपूर्ण अनुशंसा SMART सरकार हेतु एक राष्ट्रीय संस्थान की स्थापना है। यद्यपि ऐसी संस्था की स्थापना नहीं हुई है।

विकास प्रक्रिया एवं विकास उद्योग (Development Process and Development Industry)

भारत जैसे विकासशील देशों में विकास एक प्रमुख मुद्दा रहा है। स्वतंत्रता के उपरांत प्रमुख लक्ष्य तीव्र सामाजिक आर्थिक विकास था। जिसकी प्राप्ति के लिए राज्य द्वारा मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाते हुए राज्य–प्रेरित विकास पर विशेष ध्यान दिया गया। यद्यपि अन्य विकासशील देशों की तरह भारत के विकास के लिए अन्तर्जात एवं बहिर्जात दोनों बलों का योगदान रहा है। अनेक दाता संस्थाएँ जैसे कि विश्व बैंक, OECD (OrganizatonEconomic

Cooperative Development) ADB इत्यादि द्वारा सहायता एवं अनुदान प्रदान किया जाने लगा। भारत भी इन्हीं संस्थाओं तथा पाश्चात्य देशों के द्वारा उपलब्ध कराये गए वित्तीय एवं तकनीकी सहायता तथा अपने आंतरिक संसाधनों का सदुपयोग करते हुए विकास प्रक्रिया में अग्रसर हुआ।

भारत में 1950–70 के बीच के समय को विकासात्मक युग माना जाता है। इस दौरान पाश्चात्य देशों के आर्थिक विकास के मॉडल को अपनाते हुए राज्य द्वारा भारी उद्योगों की स्थापना पर विशेष बल दया गया। इस बात पर बल भी दिया गया कि ऊपरी स्तर पर विकास होने से उसका लाभ निचले तबके तक स्वतः ही छनते हुए पहुँच जायेगा। इस प्रकार आर्थिक विकास की अवधारणा के साथ–साथ टपकन सिद्धान्त को अपनाया गया। यह प्रयास बहुत आंशिक रूप से सफल रहा। इस दौरान विकास का मापन भी आर्थिक आधार पर किया जा रहा था।

(i)70 के दशक के अन्तिम वर्षों में प्रति–विकास सिद्धान्त–इस दशक में (Anti Development theory) की वकालत की गई। इसके अन्तर्गत जन–भागीदारी पूर्ण विकास पर बल देते हुए टपकन सिद्धान्त को पूर्णतः असफल बताया गया।

(ii) 70 से 90 के दशक में सामाजिक आर्थिक तत्वों का एकीकरण–इस दौरान विकास के लिए सहभागी विकास सिद्धान्तवादियों सामाजिक एवं आर्थिक तत्वों के एकीकरण की वकालत की। बड़े–बड़े उद्योग, आधारभूत संरचनाएं, भारी परियोजनाएं आदि की अपेक्षा मूलभूत आवश्यकताओं पर बल दिया गया। इस प्रकार लोगों की दैनिक आवश्यकताओं (रोटी, कपड़ा और मकान) पर विशेश बल देते हुए पाश्चात्य देशों के गैर सरकारी संगठनों ने (NGO) जमीनी स्तर के विकास व सशक्तिकरण के लिए काम करना षुरू कर दिया। इस दौरान मुख्य बल निम्नलिखित पर था।

(i) सशक्तिकरण।

(ii) संपोशणीय विकास।

(iii) भागीदारी पूर्ण विकास।

(iv) माइक्रो विकास।

(iii) 80–90 का दशक में ऋण संकट–प्रायः 1980 के दशक को विकास का अन्तिम दशक कहा जाता है। 80 के दशक में अनेक वाह्य एवं आन्तरिक कारणों के फलस्वरूप ऋण संकट उत्पन्न हुआ। इसका प्रमुख कारण तेल संकट बताया गया। भारत ऋण जाल में फँस गया और इस प्रकार एक बड़े आर्थिक संकट से

Most Trusted Learning Platform
KHAN SIR

जूझने पर मजबूर हो गया। वैश्विक देनदार संस्थाओं ने और अधिक ऋण देने से मना कर दिया। विश्व बैंक ने यह स्पष्ट कर दिया था कि विकासशील देशों के अल्प विकास/पिछड़े रहने का कारण उनका कमजोर अभिशासन है। साथ में यह भी कहा कि जब तक गुड गवर्नेन्स की षर्तों को नहीं अपनायेंगे इन देशों को ऋण नहीं उपलब्ध करवाया जायेगा। भारत ने तात्कालिक समस्या के समाधान के लिए सोना गिरवी रखा था।

अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों ने सुशासन की रणनीतियों को अपनाये जाने पर बल दिया। इस प्रकार भारत में आर्थिक उदारीकरण अपना लिया गया। उदारीकरण के साथ–साथ विश्व बैंक की शर्तों को भी स्वीकार कर लिया गया। 90 के दशक में विश्व बैंक ने व्यापक विकास प्रारूप (Comprehensive Development) तैयार किया। जिसमें गुड गवर्नेन्स, निजीकरण तथा बाजारीकरण पर बल दिया गया। विश्व बैंक के अनुसार (C.D.F) के अन्तर्गत वर्तमान वैश्विक पूँजीवादी प्रणाली में गरीबों को भी शामिल करते हुए उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय पूँजी की सेवा में लगाना भी शामिल है। यद्यपि भारत भी इस नयी वैश्विक व्यवस्था में स्वयं को समायोजित कर चुका है फिर भी सामाजिक विकास के स्तर पर विशेष रूप से गरीबों एवं वंचितों के लिए अनेक प्रयास करने आवश्यक है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार अनेक विकास कार्यक्रम तथा सामाजिक विकास एवं सशक्तिकरण कार्यक्रम चला रही है। उदा0 (MGNEREGA, food Security Bill)

UNO ने विकास के अधिकार पर घोषणा अपनायी। जिसका उद्देश्य विकास को केवल लक्ष्य अथवा आकांक्षा के बजाय नागरिकों एवं देशों दोनों के लिए यथार्थ बनाया जाए। इस प्रकार यह कहा गया कि लोगों को विकास करने का अधिकार है और राज्य को इसके लिए प्रयास करने चाहिए। इसके माध्यम से UNO ने विकासशील देशों की वैश्विक स्तर पर समतामूलक विकास की मांग तथ्य अन्तर्राष्ट्रीय शक्ति के समतामूलक बँटवारे की मांग को भी स्वीकार किया। यह कहा गया कि सभी व्यक्तियों का यह अधिकार है कि वे विकास करें।

Most Trusted Learning Platform
KHAN SIR